Digitized by eGangotri

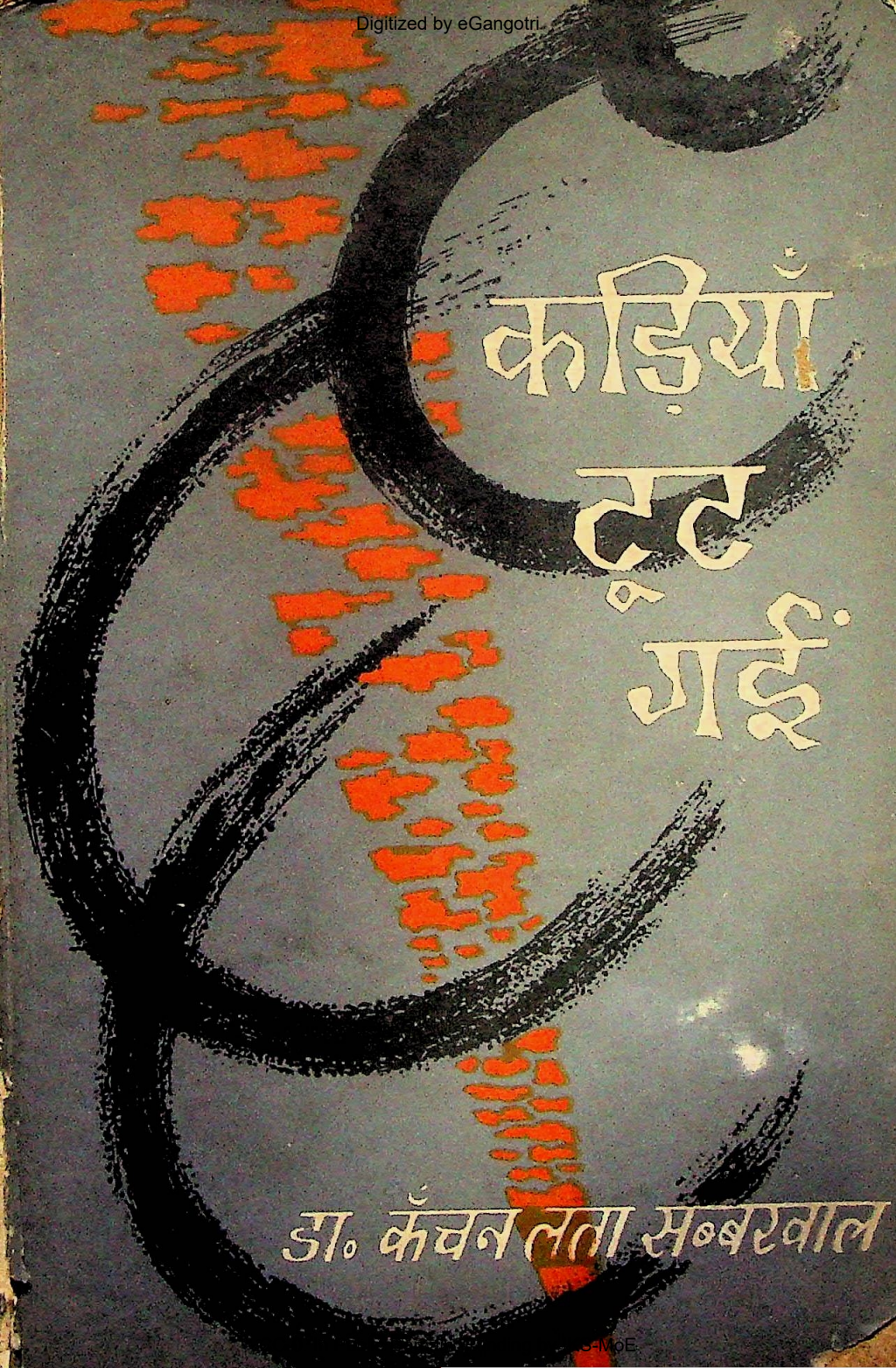

Digitized by eGangotri

कड़ियाँ टूट गयीं

[कहानी संग्रह]

Kadiyan Toot Gayen.

डा० कंचनलता सब्बरवाल
एम० ए०, पी० एच-डी०
प्रधानाचार्या
महिला विद्यालय डिग्री कालेज
लखनऊ

Dr. Kanchanlata Sabarwal

SHEIK ... & SONS
Boo... shers
Mai... shmir
"स्कैन्ड/Scanned"

भारतीय ग्रन्थमाला
पुस्तक प्रकाशक एवं विक्रेता
रामकृष्ण पार्क (गूंगे नवाब पार्क)
अमीनाबाद, लखनऊ

Bharty Granthmala
Book-Sellers
and Publishers
Ram-Krishan Park,
Aminabad, Lucknow

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

Acc. No 30593
Cost Rs. 5.00
Date 4.2.68

Uttar Pradesh State
Library
Srinagar

● प्रकाशक

विनोद शर्मा

संचालक, भारतीय ग्रन्थमाला

गूंगे नवाब का पार्क, अमीनाबाद,

लखनऊ

H83.1
K12K

● मूल्य

पाँच रुपये पचास पैसे

● प्रथम संस्करण

सितम्बर १९६७

● मुद्रक

एस० आर० प्रिंटिंग प्रेस,

लखनऊ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

दो शब्द

जीवन के कुछ चित्र विभिन्न रूप में समय-समय पर सामने आते रहते हैं उन्हीं को जोड़ तोड़ कर कल्पना के रंगों से रंग चुन कर सम्मुख रखने का मैंने प्रयास किया है। मेरे मन में तो ये चित्र सर्वथा प्राकृतिक हैं स्वाभाविक हैं सत्य हैं हो सकता है कि किन्हीं पाठकों को ये तनिक विचित्र से भी जान पड़ें किन्तु मेरे निकट तो यह सर्वथा सत्य है। यदि इनसे तनिक भी पाठकों का मनोरंजन हो सका अथवा मेरे प्रिय पात्रों के प्रति अपनत्व की भावना जाग सकी तो मैं अपने प्रयास को सफल समझूंगी। इसी भावना से मैं कुछ कहानियां पाठकों के समक्ष रख रही हूं।

कंचन लता सब्बरवाल

लखनऊ ३०-८-६७

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

क्रम सूची पृष्ठ संख्या

१
कड़ियाँ टूट गयीं ७

२
चिराग़तले ३१

३
धुँधली रेखाएँ ४३

४
बुलबुले ५७

५
कफ़ेदस्त की हैं मजबूरियाँ ६५

६
ओटन लगे कपास ७९

७
तमन्ना मिटाई जाती हैं ९३

८
अधूरे दायरे १०९

९
वह फिर चूक गई ११९

१०
आखिरी तमन्ना १२७

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

SPS
891.433 K 12 K
30543

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कड़ियाँ टूट गयीं

बल्ब दो चार बार लपलपा कर अचानक बुझ गया·····अन्धकार छा गया और झींगुरों की आवाज उसी प्रकार आती रही·····नौकरों की आवाजें सुनाई पड़ने लगीं—'फ्यूज बाँधो', 'अरे उदित कहाँ है ?' 'ड्राइवर को बुला लो ना'। फूलों की महक से भरे हुए सजे-सजाये कमरे के एकमात्र पलंग पर पूरी तरह सजी बनी अमला झुंझला उठी अपने आप पर····· अपने नये वातावरण पर·····इस अपने तेरह घंटे पुराने घर पर। खिड़की के बाहर फूले-फूले मौलसरी के वृक्षों पर और·····और एक बारगी सभी पर·····अचानक दूधिया प्रकाश से कमरा पुनः जगमगा उठा। अमला का मन भरभरा उठा·····अचानक उसे जान पड़ा कि वह डूब रही है किन्हीं·····किन्हीं·····बहुत ही गहरी गहराइयों में····· उसे जान पड़ा कि अन्धकार बहुत बहुत गहरा हो उठा है यद्यपि बल्ब का दूधिया प्रकाश कमरे भर में छाया हुआ था। उसे जान पड़ा कि खिड़की के बाहर मौलसरी के नीचे कोई दो भरी-भरी आंखें चमक रही हैं·····कोई दो लाल-लाल से होठ फड़क रहे हैं·····कोई दो सुन्दर से हाथ हिल रहे हैं·····उन कोमल लाल-लाल गुलाबी-गुलाबी किन्तु सुदृढ़ होठों से दृष्टि को छूती ध्वनि सी निकल रही है·····अमला ! यह क्या हुआ ? और अमला का सारा व्यक्तित्व गूँज उठा·····'अमला ! यह क्या हुआ ? 'क्या हुआ ?' 'क्या हुआ ?' अमला काँप उठी·····प्रकाश की किरणें उसे चुभने लगीं·····ध्वनि उसे सालने लगी·····यह क्या हुआ·····सचमुच

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

यह क्या हुआ·····उसने तो कभी इसकी कल्पना भी नहीं की थी, और तभी खिड़की के बाहर धुंधलके में से वह दो सुन्दर आँखें मानो गहरी नीली झीलों की तरह भर आईं।

घर भर में गूँज रहा शोर मिली-जुली हल्की-हल्की····भारी-भारी···· तीखी-तीखी·····मीठी-मीठी····· कड़वी-कड़वी·····स्वरों की·····बिना स्वरों की गुँजारें अमला के मन के किसी भी कोने को जरा भी तो नहीं छू रही थीं। अभी अभी उसके पास भीड़ थी ·····सजी बनी युवतियों की····· उनके स्वस्थ, सबल कहकहों की·····उसके भीनी-भीनी यौवन की सुगन्ध से बसे वस्त्रों की सरसराहट की·····उनकी बेखबर, लापरवाह मुस्कानों की और चीख-चिल्लाहट की हंसी-मजाक की और बोली-ठठोली की····· लेकिन इस समय वह अकेली है·····नितान्त अकेली·····और वह चमकती आँखें·····मुस्कराते होंठ·····यह क्या हुआ·····

उन गहरी झीलों में तैरता हुआ बजरा·····बोट·····उसमें लगे हुये लाल लाल कपड़े से मढ़े हुये गद्दे·····भाभी की रेशमी साड़ी की सर-सराहट·····उसका वह कोमल स्वर·····गूँजती आवाज·····चाँदनी में भीगे स्वर भावनाओं से निचुड़ती हुई पंक्तियाँ—

'माँग कर मय न पियूँ ये मेरी खुददारी है।'

'ये तो मतलब नहीं इसका कि मुझे प्यास नहीं।'

'जरा इधर भी नजरे इनायत हो जाये सरकार'

अमला चौंक पड़ी·····स्वप्न·····कैसा था वह स्वप्न किन्तु यथार्थ···· खिड़की के बाहर दो चमकते सितारों की उदासी घनी हो उठी थी ·····जान पड़ा दो बुझे हुए अंगारे तड़फड़ा रहे हों। अमला के भीतर कुछ कसक सी उठी·····उसने कठिनाई से टीका लगा, बिंदियों से सजा हुआ माथा ऊपर उठाया·····उसे जान पड़ा कि वह भूल रही है, सब कुछ भूल रही है, भूलती जा रही है·····सच ही यह क्या सम्मोहन है·····कैसा देवस्वरूप है·····कितनी खिलीखिली सी मूर्ति है····· कैसा भरा-भरा सा व्यक्तित्व है·····अमला ने दृष्टि नीची कर ली·····

'यहाँ बैठ सकता हूं?' उसने मुस्करा कर कहा·····अमला कुछ कह न सकी 'किन्तु' वह दूसरे क्षण पलंग पर अमला के निकट ही बैठा था·····

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अमला के मुख पर घूँघट नहीं था किन्तु उसका समूचा व्यक्तिव मानो घूँघट में छिप सा गया था·····'यह क्या हुआ ?' 'यह क्या हुआ ?' शायद वही जो होना था; शायद वही जो सदा होता रहा है, होता आया है·····शायद वही जो कभी नहीं होना चाहिए·····कभी नहीं होगा·····कभी नहीं हो सकेगा·····'अमला ! हमसे बोलोगी नहीं क्या ?' उसी कोमल स्वर ने कहा। अमला फिर एक बार स्वप्न से जाग उठी····'यह क्या हुआ ? लेकिन यही तो मेरे स्वामी हैं·····इस लोक के, परलोक के, जन्म-जन्मान्तर के, इन्हीं के लिए तो मां रखवाती थी हरतालिका का व्रत·····लेकिन····· 'ये कैसी हैं चमचमाती आंखें·····उसके कानों में गूँज उठी····· स्वरलहरी·····हजारों बार सुनी ध्वनि·····यकीन वादा नहीं तावे इन्तजार नहीं·····किसी तरह भी दिलेजार को करार नहीं·····'उसका हजारों बार किया निश्चय डगमगा रहा था·····'उसका दिल काँप रहा था····· मां ने रोते हुये कहा था 'अमला ! बेटा ! कमला का क्या होगा ? तू इसे अपने हाथों ही जहर दे देना···· ···'अमला ने सोचा था कि वह जहर स्वयं पी लेगी·····वह मीरा की जाति की है·····सती के देश की है, सीता की प्रतिनिधि, है वह जहर पियेगी पिलायेगी नहीं किन्तु·····किन्तु·····इस देवोपम सुन्दर सरल युवक ने उसका क्या बिगाड़ा है·····

उसन अपने दाहिने हाथ में अमला की ठुड्डी तनिक सी ऊपर उठा कर उसकी आँखों में झाँकना चाहा·····अमला की भारी-भारी पलकें चुपचाप उसकी गहरी काली सुन्दर आँखों पर गिर गयीं लम्बी बरौनियां मिल कर एकाकार हो गयीं·····विचित्र मुख और सिन्दूरचर्चित भाल कुछ ऊँचा हो गया·····उसके लाल-लाल होठ बार-बार कांप-कांप कर रह गये····· युवक ने अपने दोनों हाथों में उसका मुख थाम कर ऊँचा कर लिया·····

"आँखें नहीं खोलोगी अमला ?"

अमला को जान पड़ा कि वह अचेत हो गयी है। आस-पास का वातावरण धूमिल होता गया·····दो सुन्दर आंखें भीगती गयीं और·····और···· अमला किन्हीं दो बलिष्ट सुन्दर बाहों में काँपती गयी समाती गयी····· अचानक एक झटका सा लगा·····अमला खड़ी थी·····युवक उसे एक-टक देख रहा था। लवंगलता सी सुडौल देह, साँचे में ढली सी बाँहें·····अंग-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अंग मानों विशेष परिश्रम से रचा गया हो·····प्रतिमा सी एक हाथ पलंग से पीठ पर रख कर खड़ी हुई अमला कमरे के दूधिया प्रकाश में दिवांगना सी जान पड़ी उसे·····वह मुस्करा पड़ा स्वयं ही परम सन्तोष से·····भाभी ने कहा था चुपके से कान में घुड़चढ़ी के समय·····'अप्सरा लेने जा रहे हो भैया !' बहिन ने घुड़चढ़ी के बाद चुटकी काटते हुये कहा—'अब पूछेंगे भैया से कि कितने दौरे होते हैं और कितना काम दफ्तर में होता है।

यार दोस्तों ने बहुत से पाठ पढ़ाये थे···· बहुत से नुस्खे बताये थे····· बहुत सी चुटकियां सुझायी थीं ·····उसे वह सारे कथनोपकथन याद आ गये जो कि उसने ऐसे अवसर के लिए तैयार कर रखे थे, कल्पना में·····पढ़े थे उपन्यासों में, सुने थे इधर उधर·····पर ये तो अब तक एक शब्द भी नहीं बोली है पढ़ी लिखी लड़की है·····बच्चा भी नहीं है····· सुना है यूनीवर्सिटी में कुछ किसी किस्म की लीडर वीडर भी थी फिर इतनी लज्जा·····इतना संकोच·····

दो तड़फती आँखें·····दो आँसुओं से भरी आँखें·····दो तिलमिलाती आँखें 'यह क्या हुआ अमला ? यह क्या हो गया ?' और अमला चुप····· वह कहती भी तो क्या ? 'कुछ दिन तो इन्तजार करतीं। इतनी जल्दी थी ?' स्वर में व्यंग अधिक था या दर्द यह अमला न उस दिन समझ पायी थी और न आज ही लेकिन वह अध्याय तो कभी का समाप्त हो चुका है फिर आज यह कसक कैसी·····उसने साहस करके उसकी ओर देखना चाहा····· वह तो एकटक उसी की ओर देख रहा था कितनी भोली, कितनी सरल है वह दृष्टि·····अमला इसी को ठगने चली है·····अमला ठगेगी उसे····· इस सरल चित्त·····सुन्दर प्राणी को·····इसने तो अमला का कोई अपराध नहीं किया ····माना कि यह सजातीय है किन्तु यह इसका अपराध तो है नहीं·····इस युग में·····आज के दिन भी यदि····यदि·····शिव विजातीय है तो यह उसका अपराध था क्या ? किन्तु दण्ड तो उसे मिला ही·····क्यों मिला ? किसलिए मिला ? अमला नहीं जानती·····अमला नहीं समझती·····पर मां·····उसकी दुःखिन मां·····उसकी विधवा निराश्रिता·····परमुखापेक्षी मां·····ब्राह्मणी मां सती साध्वी मां····· वह तो सब जानती है·····सब समझती है और यह युवक·····यह भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

सब जानता है·····सब समझता है·····"अमला ! दर्द की असाध्य ध्वनि सी करुण पुकार आज भी अमला के कानों में·····मन के कानों में गूँज उठी·····किन्तु उपाय ही क्या है ? कमला उसकी नन्हीं सी प्यारी सी बहिन, उसकी तपस्विनी मां·····उसकी उसकी·····किन्तु शिव·····शिवेन्द्र····· शिब्बू·····शिबोला·····वह चाँदनी रात·····मुंहबोली भाभी का मुंह-बोला देवर शिव और·····और·····यूनीवर्सिटी का अन्तिम वर्ष·····और उसके भी अन्तिम दिन·····उसकी देह भर में मानों काँटे उग आये····

'बैठ जाओ थक जाओगी अमला रानी'

बड़े लाड़ से हाथ पकड़ कर उसके पति ने उसे अपने पास ही पलंग पर बिठा लिया·····अमला निर्जीव निष्प्राण शरीर मात्र सी बैठ गयी किन्तु घनी सर्दी की भीगी भीगी रात में भी उसका शरीर पसीने से भीग उठा····· बाहर की चहल-पहल रात की निस्तब्धता में डूब चुकी थी चाँदनी छिटक कर खिडकी में भीतर आ तो रही थी किन्तु बल्ब की रोशनी में फीकी-फीकी सी पड़ गयी थी ।

'बत्ती बुझा देता हूं चाँदनी का आनन्द तो ले सकें हम लोग' वह खड़ा हो रहा था ।

"नहीं नहीं·····"

विचित्र से स्वर में उसने कहा । यह पहला ही शब्द था जो अजित ने अमला से सुना·····उसे बड़ा बिचित्र सा लगा·····फिर भी वह तनिक हँस कर बोला--"डर लगता है क्या ? मुझसे ?" उसने मुस्कुराते हुए कहा । अमला को याद हो आया·····उस दिन भाभी के बच्चे का जन्म दिन था, अमला को वहीं कुछ देर हो गयी थी·····अन्धेरा घिर आया था भाभी उसकी लोकल गार्जियन थीं अकेली कैसे जाने देतीं होस्टल, सो शिवेन्द्र से कहा था उसे होस्टल तक पहुंचा आने को·····होस्टल था तो पास ही पर रास्ता अँधेरा था । दोनों सटे-सटे से चले जा रहे थे । शिव टार्च दिखा रहा था । अचानक टार्च बन्द हो गयी । अमला ने घबराकर छिठकना चाहा तभी शिवेन्द्र ने कहा था--'डर लगता है क्या ? मुझसे ?' टार्च जल गयी थी । अमला ने कुछ चिढ़ाते हुए कहा था 'डरूंगी मैं ? और वह भी तुमसे ? ऐसे बड़े बहादुर हो ना ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"बहादुरी का प्रमाण चाहती हो क्या ?"

उसने कृत्रिम भभकी देते हुए कहा था।

'जाओ, जाओ एक लड़की के सामने बहादुरी का प्रमाण देने चले हैं। अभी कहीं से एक भूत निकल आए तो चीख कर भागो ! और दोनों अकारण ही हँस पड़े थे.....

अमला हँस न सकी.....कुछ कह न सकी.....

अजित का जी चाहा कि उसे दोनों बाहों में भर कर जोर से कस ले किन्तु उसने कुछ क्षण तक एकटक अमला की ओर देखते रहने के बाद कहा—'थक गयी होगी। सो जाओ, बत्ती चाहो तो जलने दो और चाहो तो यह बुझा कर वह धीमी नीली बत्ती जला दो.....ठीक है न.....' उसने धीरे से अपने बायें हाथ में अमला का मेंहदी रचा अंगूठियों से भरा कलाइयों तक चूड़ियों से सजा दाहिना हाथ ले लिया।

'अमला क्या तुम मुझसे नाराज हो ? मैं तुम्हें पसन्द नहीं आया क्या ? या तुम्हें कुछ कष्ट है ? कुछ तो बोलो।

अमला मन ही मन चीख उठी 'देवता' ! तुम मेरे जीवन में पहले क्यों नहीं आये..... ...पहले, केवल तीन चार वर्ष पहले जब मेरा मन कुंवारा था मेरा व्यक्तित्व अछूता था.....जब मैं अपनी थी.....केवल अपनी..... या फिर तुम तनिक कठोर क्यों नहीं हुए.....तुम इतने कोमल क्यों हो ? तुमने बरबस मेरा हाथ पकड़ कर घसीटा क्यों नहीं ? तुमने मेरे एक बार न बोलने पर मुझे डाँटा क्यों नहीं तुम कठोर क्यों नहीं हो पा रहे.....मैं तो तुम्हारी पत्नी हो ही चुकी हूं.....अग्नि की प्रदक्षिणा करके.....मंत्रों द्वारा बाँधी जाकर फिर भी तुम पौरुष का दावा क्यों नहीं जता रहे मेरे निकट..... नहीं, नहीं मैं तुम्हें इतने ऊँचे धरातल पर रख कर कैसे तुम्हारे पदतल में रह सकूंगी.....मैं.....मैं.....तुम्हें नहीं छल सकूंगी..... देवता.....शिव ने कहा था—अमला यह तुम्हारा त्याग नहीं है आत्म-प्रवंचना है, दान नहीं है बेबसी है। तुम देवदास की पारो कभी नहीं बन सकोगी.....वह तुमसे कभी नहीं बन पड़ेगा.....तब क्यों नहीं सबल स्वस्थ नवयुग की नारी ही बनती.....अमला ने सोचा था कि स्वार्थ-प्रवण शिव उसके त्याग को, हृदय घोंट-घाँट कर भी माँ की इच्छा, कमला के

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हित की पूर्ति करने को नहीं समझ सकेगा, कभी भी नहीं समझेगा..... समझ कर भी नहीं पहचानेगा... ....नहीं मानेगा..... उसने कहा था--

'चलो, हम भाग चलें'

'छीः छीः मां की वृद्धावस्था में सफेद बालों में धूल डलवाऊँ ऐसी मैं नहीं हूं, और फिर कमला.....'

'कहीं कुछ नहीं होगा, अमला फिर सोच लो.....'

'नहीं शिब्बू तुम नहीं जानते.....'

'पारो को देवदास की सबल बाहों का आश्रय माँग कर भी नहीं मिला था और तब भूल की थी देवदास ने आज उस भूल को तुम जान-बूझ कर दोहराना चाहती हो अमला।'

'मुझे मेरे भाग्य पर छोड़ दो शिव, अब बहुत देर हो चुकी है लौटने का समय नहीं रह गया है अब'

अमला सोचने लगी कि कैसे करेगी अपने कष्ट का वर्णन वह इस व्यक्ति से इस सभ्य.....सुसंस्कृत.....सुरुचिपूर्ण.....व्यक्ति से.....किन्तु ऐसे छलपूर्ण.....प्रवंचनापूर्ण जीवन के बीच कैसे जी सकेगी वह..... नहीं जी सकेगी.....सचमुच नहीं जी सकेगी.....नहीं ठग सकेगी सचमुच नहीं ठग सकेगी.....नहीं बन सकेगी.....कभी नहीं बन सकेगी पारो..... निरुपाय.....विवश पारो..... किन्तु क्या उसे कह देना ही चाहिए।

अमला पिछले एक पक्ष से दिनरात यही एक प्रश्न को अपने आप से करती रही है लगातार क्षण क्षण किन्तु फिर भी निश्चय कहाँ कर पायी उद्भ्रान्त हो उठा उसका सिर चकराने लगा.....किन्तु कहाँ निश्चय कर पायी वह.....कहाँ निश्चय कर सकी वह.....किन्तु अब और समय ही कहाँ है.....उसे निर्णय कर लेना होगा अभी-इसी समय इसी क्षण अभी और अभी न जाने क्यों अजित का प्रफुल्लित, प्रसन्न मन अत्यधिक उदास हो उठा। उसे जान पड़ा कि सब कुछ बहुत सूना-सूना सा है.....वह बहुत थका-थका सा है.....उसके सामने खड़ी यह नारी प्रतिमा अपरिचित सी है। उससे दूर.....बहुत दूर है.....उसका भावुक मन उदासी की गहराइयों में डूबने लगा.....अमला.....अमला...क्या अमला उसे पसन्द नहीं कर पायी...उसने तो कभी बचपन में भी किसी से कुछ छीन झपट कर नहीं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

लिया—लेने की प्रवृत्ति ही नहीं हुई····घर पर भाई-बहिन थे ही नहीं····· स्कूल में भावी छात्र था उसे सब कुछ तो सहज ही सुलभ था·····नहीं लेगा वह कभी भी कुछ बरबस नहीं लेगा, छीन कर नहीं लेगा, डाका डाल कर भी नहीं लेगा·····जहाँ सहज मुक्तहस्त दानी नहीं मिलेगा वहाँ वह अधिकार का दावा नहीं जताने जायेगा कभी भी नहीं जायेगा·····क्यों जायेगा वह·····किन्तु कितनी प्यारी है यह अमला·····यही नारी····· यह रहस्य की अनकही कहानी·····अनबूझ पहेली·····यह मेरी है····· मेरी पत्नी है समाज स्वीकृत यह लोक की साथिन है·····स्वकीया है····· और उसे न जाने क्यों परकीया की बात सोचते ही हँसी आ गयी·····कैसे विचित्र जीव थे वे कवि जो परकीया के पीछे मृग-तृष्णा की भाँति दौड़ते रहते थे·····

आत्मा का सारा बल लगाकर मानो एक झटके में अमला ने कहा—'मुझे क्षमा कर सकोगे ?' स्वर अजित के कानों में गूँज उठे। उनमें न अपराधजन्य भय अथवा ग्लानि की ध्वनि थी और न नवपरिचयजन्य अचकचाहट की औचकता·····

कैसा विचित्र था यह प्रथम स्नेह सम्भाषण ? ठोस स्वदेशी धरती पर ठोस स्वदेशी दम्पति के बीच·····अजित चार वर्ष जर्मनी में रहा था। विदेशी धरती पर उसने ऐसी बहुत सी बातें सुनी थीं किन्तु सफल इंजीनियर अजित यह नहीं जान सका कि स्वदेशी धरती पर प्रथम सम्भाषण में ही पत्नी को पति के निकट क्षमा प्रार्थी होने की आवश्यकता क्यों पड़ गयी····· तिस पर अमला सुशिक्षित है सरल है, सुशील है, स्वभाव की भली है। सभी तो यही कहते हैं तभी तो दान-दहेज कुछ भी न लेकर उसने और उसकी मां ने उसके पिता ने यह सम्बन्ध स्वीकार किया था·····अजित का भावुक मन गल उठा·····

'आपको भले ही छल लूँ किन्तु स्वयं को शायद नहीं छल पाऊँगी यही इन कुछ दिनों में जान पायी हूं किन्तु जानकर भी तुम्हारे·····आपके जीवन में विष घोल दिया। इस अपराध को आप क्षमा कर पायेंगे क्या ?'

अजित कुछ भी नहीं समझ पाया किन्तु समझने की शक्ति ही शायद उसमें नहीं रह गयी थी·····वह चकरा गया था·····उसे प्रकाश में भी सर्वत्र

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अन्धकार ही दीखने लगा था किन्तु वह सभ्य था, सुसंस्कृत था, संयमी था···· अमला की आँखों से बहते हुए आँसुओं की ओर एक ओछी सी दृष्टि डाल कर उसने बड़ी कठिनाई से अपने आपको संयमित करके कहा—

'अमला ! यदि तुम नारी के किसी जाने-अनजाने पाप-अपराध की कथा मुझे सुनाना चाहती हो तो जाने दो। उसे सुन कर क्या करूँगा ?'

किन्तु उसे जान पड़ा कि उसकी शराफत ने उसकी मानव वृत्तियों की उसके इन्सानी दिल की हत्या कर डाली है। उसका सिर भयंकर पीड़ा से जल उठा·····उसकी आँखें अंगारे सी जल उठीं।

'तब जाने दो, तुम, आप·····क्षमा भी नहीं कर सकेंगे और मैं क्षमा के उस भार को जीवन भर ढो भी नहीं सकूँगी।'

'अमला, मुझे गलत न समझो। अब सो रहो, रात बहुत हो गयी। कल फिर सब सुनूँगा।' और वह चुपचाप बत्ती बुझाकर पलंग पर एक ओर पड़ रहा·····उसे जान पड़ा कि उसके सिर के भीतर हजारों भयंकर मशीनें एक साथ ही गरज रही हैं·····टूट-फूट रहीं हैं और वह उनके नीचे पिसा जा रहा है। अमला कुछ देर उसी प्रकार चुपचाप शून्य में ताकती बैठी रही। खुली खिड़की से दो भीगी-भीगी आँखें निरन्तर उसे ताक रहीं थीं····· उनमें चमक थी·····

नहीं, नहीं वह विश्वासघात कर चुकी है किन्तु छल-कपट के बीच शराफत का मुखौरा लगा कर नहीं जी सकेगी·····नहीं रह सकेगी·····किन्तु उसे क्या हो गया था तब क्यों नहीं वह कर पायी विरोध तभी·····नहीं कर पायी·····कैसे करती किसके बल पर करती·····और माँ·····और कमला····· और·····और·····यह निरीह·····सहज विश्वासी·····सभ्य·····संयमी प्राणी·····

अजित तड़प रहा था बिना समझे बिना जाने····· उसका मन-प्राण असह्य वेदना से जला जा रहा था·····नहीं वह घृणा नहीं करेगा·····क्रोध भी नहीं करेगा·····किन्तु कैसा विचित्र मजाक किया है भाग्य ने उसके साथ और वह भी उसकी सुहागरात को ही·····कैसी है यह अमला क्यों कहना चाहती है यह मुझसे यह सब। काश कि यह कुछ भी न कहती कभी भी न कहती·····किन्तु वह कहती है कि वह मुझे नहीं छलेगी·····मुझे छल

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

भी ले तो स्वयं को नहीं छल सकेगी·····पर मैं तो कुछ भी नहीं चाहता था····· देने का अधिकार तो मुझे है उसका ही उपभोग करने देती तो क्या हानि थी। किन्तु·····किन्तु ·· ····मेरा जीवन क्यों विषाक्त कर दिया इसने·····तब इसे समझ क्यों नहीं आयी जब कि समय था·····कैसा होगा वह भाग्यशाली व्यक्ति·····

अमला सोच रही थी कि कितनी अभागी है वह·····और कितनी विडम्बना लिखी है उसके भाग्य में·····उसने क्यों कहा यह सब कुछ····· इन्होंने तो कुछ भी नहीं पूछा था·····अब भी तो कुछ नहीं कहा। डाँटा तक नहीं·····क्रोध भी नहीं किया·····नहीं. नहीं मैं पवित्र देवमन्दिर को अपवित्र नहीं करूँगी·····यह शरीर तो इनका ही है न्यायतः·····किन्तु मन क्या मेरा कुछ रह गया है·····लेकिन क्यों हुआ ऐसा····· ···कितनी मूर्ख हूं मैं·····क्या अधिकार था मुझे दो व्यक्तियों के जीवन नष्ट करने का ·····अच्छा तो फिर मैं इनका दिया अन्न-वस्त्र ही क्यों लूँ·····इनका यदि ये दे भी दें तो अकारण हाथ से उठा कर दिया हुआ दान मैं किस अधिकार से ले सकूँगी। नहीं लूँगी·····मैं अपना जीवन बनाऊँगी····· ···· जाने दो·····दाम्पत्य जीवन ही तो सब कुछ नहीं है·····मैं इन्हें मुक्ति दे दूँगी·····इन्होंने तो सुन कर भी मुझे दण्ड नहीं दिया, ताड़ना नहीं दी·····मैं इन्हें जीवन भर का कारावास देकर पीड़ित नहीं करूँगी····· इस देवता को और अधिक कष्ट नहीं दूँगी·····किन्तु करूँ क्या ? काश कि यह मुझ पर मेरे शरीर पर अत्याचार ही करते तो मेरा यथेष्ट दण्ड हो तो जाता किन्तु इनके देवत्व के तेज को मैं नहीं सह सकूँगी·····कभी नहीं सह सकूँगी।

'मुझे जिन्दा रहने दो मिस्टर कुमार !'

'यही तो मैं चाहता हूं किन्तु अमला तुम तो जीना चाहती ही नहीं हो।

'जी तो रही हूं और यही जिन्दगी मेरे लिए ठीक है।'

'नहीं, ठीक नहीं है लेकिन इस पर बहस करने से क्या लाभ ? अच्छा, वह नयी स्कीम तो निकाल लाओ डिस्कस कर लें तब आर्डर दूँ।'

अमला चुपचाप बाहर चली गयी। उस दिन इन्टरव्यू बोर्ड में अध्यक्ष की कुर्सी पर शिव को बैठे देख कर ही समझ लिया था कि नौकरी उसे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अवश्य मिल जायेगी किन्तु उसकी तनिक भी इच्छा यह नौकरी करने की नहीं हुई·····किन्तु क्या करेगी अमला यही वह सोच नहीं पायी। पिछले दो वर्ष तो अमला ने फिर से यूनिवर्सिटी में एम० एस० डब्ल्यू० करने के नाम पर बिता दिये।

माँ परेशान थी कि लडकी ससुराल क्यों नहीं जाती। बार-बार खोजबीन कर पूछती रहती थी कि अजीत का पत्र आया कि नहीं। उसकी समझ में ही नहीं आता था कि बात क्या है। अजीत की माँ भी बहू को बुलाने पर बार-बार जोर देती थी किन्तु अजीत हँस कर कह देता—'मां, आजकल की पढ़ी-लिखी बहू आकर भी तुम्हारे ठाकुर जी को, तुम्हारे रसोईघर को तो सम्हालेगी नहीं फिर क्या करोगी उसे बुला कर ? उसे पढ़ने ही दो न !'

'मेरी न सही तेरी सेवा तो करेगी ?'

ठंडी सांस को भीतर ही भीतर दबा कर तनिक सी बनावटी हँसी मुख पर लाकर अजीत ने कहा—'मां, मुझे तो बस तेरे हाथ की सेवा रास आती है।'

'छीः, छीः, बेटा कहीं बहू के हाथ की सेवा नहीं रास आती है। मैं क्या सदा बैठी रहूंगी ?' और फिर डेढ़ साल के भीतर अचानक दो-तीन दिन की ही बीमारी भोग कर अजीत के माता-पिता भी चल बसे। माँ के मरने पर दो दिन के लिए अमला को आना पड़ा था। काम-काज हो चुकने पर अजित ने ध्यान से देखा कि अमला कुछ मुरझा गयी है। उसने स्वयं अमला से कहा कि वह चली जाये उसकी परीक्षा निकट है।

अमला की इच्छा हुई कि अजीत से कुछ बातचीत करे। उसने अजीत को लगभग अठारह महीने बाद देखा था। आज उसके घने काले घुँघराले बालों के स्थान पर घुटी हुई चाँप थी। अमला की छाती पर घूँसा सा लगा। अजीत बहुत दुबला हो गया था। अमला ने स्नेह से कहा—'क्या काम ज्यादा कठिन है ?'

'बाँध पर काम करने वाले इन्जीनियरों का जितना कठिन काम होता है उतना ही है कुछ अधिक नहीं।' और वह चला गया। खोज कर भी अमला उससे बात करने का मौका नहीं पा सकी, अजीत ने जानबूझ कर दिया ही नहीं और वह चली गयी। अमला को नौकरी मिल गयी। अमला की माँ दो-चार दिन रोयी गायी, दामाद को पत्र भी लिखा किन्तु अमला ने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

नौकरी स्वीकार कर ली और चली भी गयी। दो सप्ताह बाद अजीत का पत्र आया कमला की मां को। उसने लिखा था--ठीक ही तो है आजकल सबको जीविकोपार्जन करना चाहिए।'

जमला की नियुक्ति किसी अन्य विभाग में हुयी थी किन्तु छः माह के भीतर ही शिवेन्द्र कुमार ने उसे अपने विभाग में ही ट्रांसफर कर लिया। अमला की इच्छा नहीं थी किन्तु वह यथासम्भव शिव से बात ही कम किया करती थी। फिर जब नौकरी हीं की थी तो यह कैसे कहती कि यहाँ करूँगी या वहाँ। पूरे डेढ़ साल धक्के खा-खा कर तो यह नौकरी मिली थी और वह भी अमला खूब जानती है कि शिव की ही कृपा से मिली थी, नहीं तो इण्टरव्यू में तो वह न जाने क्या अनाप-शनाप कह आयी थी।

अमला वर्किंग विमेन्स होस्टल में रहती थी। वेतन तो अच्छा था। कमला भी एम० ए० में पढ़ रही थी। मामा जी उसका खर्च देते थे किन्तु फिर भी अमला उसे कुछ न कुछ भेजती ही रहती। साथिनें प्रायः कहा करती थीं—'अमला तेरे पति तो इन्जीनियर हैं फिर तू इतनी मेहनत क्यों करती है ? क्या बनती नहीं ? 'अमला हँस कर कह दिया करती थी—नहीं तो, वे देवता हैं।'

शिव प्रायः उसे निमन्त्रित भी करता था और सभी कहीं उसके सम्मान बढ़ाने की चेष्टा भी किन्तु अमला को यह सब कुछ अच्छा नहीं लगता था। वह सोचती मैं इनकी कौन हूँ.....यह क्यों मेरा इतना ध्यान रखते हैं..... अग्नि की प्रदक्षिणा करके.....अग्नि को साक्षी करके मैं मिसिज कुमार बनी हूँ वही रहूँगी.....इनसे क्या ..... क्या दे पायी हूँ इन्हें कभी मैं जो इनसे झोली पसार कर ले लूँ.....क्या अधिकार है मुझे वैसा करने का यह विवाह क्यों नहीं कर लेते वह सोचती रहती..... एक दिन तो उसने देहात के एक प्रोजेक्ट को दिखा कर लौटते समय कार ड्राइव करते हुए शिवेन्द्र से कह भी दिया—

'मिस्टर कुमार आप विवाह कर लें।'

'करूँगा।' शिव ने ऐसी दृढ़ता से कहा कि अमला को कहीं कुछ चोट सी लगी जान पड़ी। मन प्राण से अमला प्रायः रोज ही मनाया करती थी कि शिव का विवाह हो जाय ताकि उसे उसके घर आने जाने में सुविधा हो जाये।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

उस नितान्त बरोम शहर में अपने व्यस्त एकाकी जीवन की थकान उतारने वह और जाय भी तो कहाँ जाय किन्तु यह दृढ़ उत्तर सुनकर वह मानो टूट सी गई। उसने उतरे स्वर में पूछा—

'क्या तय हो गई है ?'

'हाँ !' एक हाथ से स्टेयरिंग व्हील थामे दूसरे हाथ से मुँह में सिगरेट देकर शिव ने जरा सा तिरछा ही तिरछा अमला की ओर झुक कर कहा—'जरा पाकेट से माचिस निकाल कर सिगरेट तो सुलगा दो।' अमला चौंक गई। उसे शिव की इतनी घनिष्ठता अच्छी नहीं लगती किन्तु उसने भी तो घनिष्ठ व्यक्तिगत प्रश्न किया है। बेमन से सिगरेट जलाकर कुछ देर तक चुपचाप रास्ते के खेतों की ओर ताकती रही। शिव अपनी पुराना गजल गुनगुना रहा था—

'देखने वालों का ईमान चला जाता है।'

कार ड्राइव करते समय गुनगुनाना, खास तौर पर गजल गुनगुनाना शिव की पुरानी आदत है और अमला यह जानती है। उससे रहा नहीं गया उसने उदास स्वर से पूछा —

'विवाह कब तक होगा ?'

'यह तय नहीं है।'

'तो कर डालो ना तय, कौन देर है ?'

एकाएक शिव ने अमला की ओर घूर कर देखते हुए कहा—

'सच अमला ? देर नहीं है क्या ?'

अमला झेंप गयी किन्तु मन ही मन वह समझ गयी·····न जाने क्या उसे परम संतोष हुआ·····चेहरे पर रौनक लौट आयी·····किन्तु क्षण भर में ही फिर उदास हो गयी।

'मिस्टर कुमार, अतीत लौटकर नहीं आता। अतीत को पकड़ कर रखने की चेष्टा व्यर्थ है।

'किन्तु नवीन का सृजन अतीत के ही आधार पर होता है, हो सकता है अन्यथा वह चेष्टा हास्यास्पद ही हो जाती है जैसे तुम्हारा शिव को मिस्टर कुमार बना डालने की बेकार चेष्टा।'

'तुम भ्रम में हो शिव' अमला के मुख से फिसल पड़ा अचानक ही।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'सौरी, आई मीन मिस्टर कुमार'

शिवेन्द्र कुमार वही परिचित हँसी ठहाका मारकर हँस पड़ा ।

'देखो अमला एक दिन मैंने कहा था कि तुम देवदास की पारो न हो और न बन सकोगी । उस दिन तुमने मेरी बात नहीं मानी थी.....'

'किन्तु इसका यह अर्थ तो नहीं है कि.....अमला अधूरी बात छोड़ कर खिड़की से बाहर की ओर देखने लगी शायद उसकी आँखें भर आई थीं, शायद आँसुओं ने ही कण्ठावरोध कर दिया था । दाहिने हाथ से स्टेयरिंग ह्वील थामे हुए शिव ने बायें हाथ को गर्दन के पीछे से ले जाकर अमला के बायें कन्धे पर रख कर थपथपाया । अमला चिहुंक कर छिटक गयी । कार का वैलेन्स कुछ गड़बड़ा गया किन्तु शिव ने तुरन्त सम्हाल लिया ।

'देखो अगर एक्सीडेन्ट हो जाता'

'वह तो हो ही गया है और क्या होता ?' अमला ने चिढ़कर कहा । शिव ने हँस दिया....अमला जिन्दगी जीने के लिए है कुढ़ने के लिए नहीं.... क्या करोगी त्यागमूर्ति नायिका बन कर ? क्यों नहीं बन जातीं साधारण मानवी.....

'तुम पुरुष हो इसीलिये यह सब आसानी से कह पाते हो । मैं हर प्रकार से धार्मिक, सामाजिक एवं नैतिक बन्धनों में बंधी हूं इसीलिए वैसा नहीं कह पाती ।'

'सभी प्रकार के बन्धनों की सृष्टि हमारी ही की हुई है अमला रानी' बड़े प्यार से शिव ने कहा । अमला के सारे शरीर में मानों ए० सी० का करेन्ट लग गया जो कि वहीं चिपक कर रह गया । वह सिर से पैर तक काँप उठी.....उसे फुरहरी सी आ गयी । कुछ देर तक दोनों चुप रहे । कार चल रही थी ।

'आप जात-पाँत नहीं मानते.....कोई आगे पीछे है भी नहीं किन्तु मेरी मां है पुराने विचारों की.....बहिन है अविवाहिता; बिरादरी है दकियानूसी'

'मानव ने एक दिन अपने सुख-शान्ति के लिए स्वयं अपने अनुशासन की व्यवस्था की थी किन्तु यदि वह अनुशासन उसके गले को चारों ओर से घेर घोंट कर उसका दम ही निकालने लगे उसे भी फिर अनुशासित करना

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE
30549

Digitized by eGangotri

पड़ेगा। नियम मानव के लिए है मानव नियम के लिए नहीं यह मन्त्र एक दिन तुम्हें पढ़ना ही होगा।

'शायद वह दिन कभी नहीं आयेगा।'

'शायद आयेगा, अवश्य आयेगा।'

बहुत देर तक दोनों एकदम चुप रहे।

सांझ घिर रही थी। पथ की बत्तियां अभी जली नहीं थीं—डूबता सूर्य बड़ी सी लाल लाल सोने की थाली सा पश्चिमी आकाश में चमक रहा था। शिव गुनगुना रहा था—

'जो मैं सिर वसिजदा हुआ कभी तो हरम से जाने लगी सदा·····
तेरा दिल तो है सनम आशना तुझे क्या मिलेगा नमाज में·····
कभी अरे हकीकते मुन्तजिर नजर आ लवाजे मजाज़ में'

'एक बात बताओगी ?'

'पूछिए।'

'तुम्हारा पति कैसा है ?'

'देवता'

'तुमने कभी उसे प्यार किया है ? कर सकी हो ? सच बताना।'

'शायद नहीं।' फिर कुछ देर तक दोनों चुप थे·····।

'तब क्या यह सिन्दूर-धारण आत्म-प्रवंचना ही नहीं है ?'

'मण्डप के नीचे उन्होंने सिन्दूर दान किया है।'

शिव बड़े जोर से हँस पड़ा।

'और मन के भीतर ही भीतर मन में कभी उसे ग्रहण नहीं किया। जिसे किसी भी दिन ले नहीं पाई हो उसी को साइनबोर्ड की भांति माथे पर सजा कर आवरटाइज करते-फिरते तुम्हें लज्जा नहीं आती ?'

'बड़े निर्दयी हो तुम।' बड़ी देर बाद अमला के मुँह से कठिनाई से निकला।

'आपरेशन करते समय मरीज को सरजन की छुरी निर्दयी ही जान पड़ती है।'

अमला ने कुछ सँभल चुकने पर गिड़गिड़ा कर कहा—

'शिव ! तुम हर प्रकार से सबल हो, सशक्त हो, समर्थ हो। मैं सदा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ही तुमसे कुछ दबती रही हूं। मुझे मत उभारो·····मेरी दीनता को बस उघाड़ो·····मेरे मन को मत बहकाओ। मुझे अपने हाल पर ही छोड़ दो। अब और कोई उपाय नहीं है·····इस देश में नहीं है, इस जाति में नहीं है शिव !'

'सृष्टि में और भी देश हैं किन्तु देशकाल की अपेक्षा मन की शक्ति बहुत बड़ी होती है अमला यही समझ लेना तुम्हारे लिए शेष है।

मुझमें उतनी शक्ति नहीं है। जितना भर पाई हूं उसमें भी उनकी शराफत का अधिक हाथ है मेरी शक्ति के अपेक्षा। यदि वह आज भी चोटी पकड़ कर ले जायें तो सारे अपमान, सारी वेदना और समस्त प्रताड़ना के भीतर भी आत्म-प्रवंचना का जीवन मुझे जीना ही पड़ेगा। यदि वैसा करने के लिए उन्होंने विवश नहीं किया तो यह उनकी उदारता है और उसी की पूंजी लिये मैं एक तो क्या कई जन्म काट सकूँग।'

'माफ करना, हँसी नहीं उड़ाता किन्तु उपन्यासों की भाषा खूब बोल लेती हो।'

नाराज होकर अमला ने मुँह फेर कर खिड़की से बाहर देखना आरम्भ कर दिया।

फिर बहुत देर तक कोई बात नही हुई। उतरते समय अमला ने शिव को प्रणाम किया किन्तु शिव ने धीमे से स्वर में इतना ही कहा——

'अमला ! तुम्हारी भक्ति तुम्हारे पति को·····उसे जिसे तुम देवता कहती हो कितनी तृप्ति दे सकोगी यह नहीं कहा जा सकता किन्तु जीवन भर असीम वेदना तो देगी ही जिसे वह भला आदमी सहन कर सकेगा इसमें मुझे तो सन्देह हैं किन्तु तुम्हारी भूल का दण्ड तीन जिन्दगियां खराब करना ही है ऐसा जान पड़ता है।'

कार चली गयी। अमला को सूने कमरे के सूने वातावरण में जाते हुए डर सा मालूम हुआ। देर हो गयी थी। प्रायः सभी महिलाएँ अपने-अपने कमरों के भीतर सो चुकी थीं·····अमला अब स्टोब नहीं जलायेगी····· खाना नहीं बनायेगी·····तब फिर खायेगी कैसे ; शिव का खानसामा मेज सजाये बैठा होगा किन्तु शिव का निमन्त्रण तो वह कभी मानती नहीं है··· वह शिव को बदनाम नहीं करेगी किन्तु उससे क्या वह शिव के जीवन का

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अभिशाप तो बन ही चुकी थी·····शिव के ही क्यों अजित के·····देवता सरीखे अजित के जीवन का भयङ्कर अभिशाप भी तो वही है····तब फिर वह क्या करे·····अजित को मुक्ति दे दे·····किन्तु शिव····और वह स्वयं····· नहीं····नहीं····यह सब क्या है ? किन्तु शिव कहता तो ठीक है····नियम, कानून इन्सान के लिये हैं न कि इन्सान कानून के लिये·····कितना हँसता है यह शिव, कितना प्रसन्नचित्त है·····यह तो सदा का ही आनन्दी जीव है····· मुझ में ऐसा है ही क्या किन्तु शिव फिर भी मुझे ग्रहण····उच्छिष्ठ को ग्रहण करने को तैयार है किन्तु मैं उसे वैसा नहीं करने दूँगी·····किन्तु यह सब तो पुरानी मान्यताएँ हैं·····पुरानी भी कहाँ·····पुराने राजा विजित राजा की विधवा पत्नी से विवाह कर लेते थे···· छोः, छीः मैं यह क्या सोच रही हूं···· मां····· मेरी मां····· कमला····· मेरी कमला····· और····· और मेरा शिव·····वह मन में ही कहते-कहते स्वयं अपने आपसे झेंप गई, शरमा गई और वैसे ही बिस्तर पर पड़ रही ।

'टाटा, स्वीटी' कह कर अमला ने अपने तीन महीने के पुत्र को आया की गोद में ही प्यार भर लिया । शिव ने अमला के कन्धे पर हाथ रख कर कहा अब चलो डार्लिंग देर हो जायेगी·····और दोनों भरे-भरे से मुस्कराते हुए एक दूसरे की बाहों में हाथ डाले लिफ्ट की ओर चल दिये । पिछले एक साल से शिव और अमला ज़ूरिच के इस सुहावने होटल में ही हैं । शिव के एक दूर-दराज़ के चाचा का दो-ढाई वर्ष हुए देहान्त हो गया था और वह अपनी लम्बी-चौड़ी बिजनेस शिव के ही नाम कर गये थे । शिव उसी बिजनेस के सिलसिले में मशीने आदि खरीदने जर्मनी आया-जाया करता । इधर उसने बिजनेस खूब बढ़ा भी लिया था । नौकरी तो तभी छोड़ दी थी । अमला काम करती रही । पिछली बार जब शिब यूरोप आने लगा तो उसने अमला स कहा कि वह चले सैर ही कर आये । कठिन परिश्रम से, चिन्ता और परेशानी से अमला का स्वास्थ्य गिरने लगा था । उधर अमला की मां का भी देहान्त हो गया था । कमला के विवाह की भी चिन्ता थी । वह भी एक स्टाइपेन्ड पर लन्दन के इन्स्टीच्यूट आफ ऐडूकेशन में एम० एड० कर रही थी । अमला कैसे जा सकती थी ? खर्च भी कहाँ से आता फिर वह क्यों जाये शिव के साथ·····इधर तो उसने शिव से मिलना ही बन्द कर दिया था·····शिव भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अत्यधिक व्यस्त था व्यापार में अतः समय ही नहीं मिल पाता था। यदि कभी समय निकाल कर आता भी तो अमला व्यस्त होती और यदि न भी होती तो दो-चार मिनट में ही व्यस्तता का बहाना करके उसे विदा कर देती। उसे डर लगने लगा था। एक दिन शिव ने पूछा था 'डरती हो मुझ से ? इतना नीच हूं क्या मैं ?' 'नहीं, तुम से नहीं अपने आप से डरती हूं शिव' घनी उदासी से उसने कहा था।

'अपने ऊपर इतना जुल्म क्यों करती हो ?'

'यह मेरा भाग्य है।'

'भाग्य बदल भी सकता है।'

'शायद नहीं ?'

उसने कहा—'नहीं, मैं कहीं नहीं जाऊँगी।'

और शिव चला गया। जाने के एक दिन पूर्व उसने आकर कहा—

'मुझे एयरपोर्ट पहुंचाने तो चलोगी ?'

'आज यह क्यों ? कभी तो गई नहीं।'

'बस, इस बार चली चलो। मेरी इच्छा है। तो मैं लेता चलूँगा तैयार रहना।' एयरपोर्ट पहुंच कर शिव ने दो एयर टिकट अमला के हाथ में दिये।

'क्या करूं ?'

'पर्स में रख लो।'

'क्यों ?'

खोल कर देखा। पढ़ कर अमला चौंक उठी।

'यह क्या मेरा पूरा सर्वनाश करके ही दम लोगे और पासपोर्ट, मेरी नौकरी..... यह क्या तमाशा है शिव.....बचपने की भी हद होती है।'

'पिछले साल तुम्हें सरकारी तौर पर एक कान्फ्रेन्स में जिनेवा भेजने की बात थी न, मैंने ही तो तुम्हारा पासपोर्ट बनवाया था जो कि मेरे ही पास पड़ा रहा क्योंकि फिर किसी दूसरे को भेज दिया गया था।'

'और कपड़े सामान आदि.....क्या यह बच्चों का खेल है कि बस चले चलो।'

'तुम्हारे कपड़े आदि मेरे साथ हैं। बाकी सामान मेरा मैनेजर तुम्हारे कमरे से ले आयेगा। याद है तुम्हारी डुप्लीकेट की मेरे पास थी।'

'और नौकरी ?'

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'कल इस्तीफा पहुंच जायेगा।'

'यह क्या किडनैपिंग है ?' अमला हँस दी।

'जी हाँ, अपने पतिदेव को लिख देना कि धारा ३६६ में मुकदमा चला दें मुझ पर। चाहे तो ३७६ में भी धर लें।'

'मैं धाराएं तो नहीं जानती किन्तु यह सब क्यों ?' उसका मुँह उतर गया और उसे फिर से उदासी घेरने लगी किन्तु तभी हवाई जहाज के चलने की घोषणा की गई और जल्दी-जल्दी दोनों काउण्टर की ओर तुलने चल दिये। सामान मैनेजर रखवा ही चुका था। अमला की इच्छा लौटने की हो रही थी कि शिव लगभग उसे घसीटता हुआ हवाई जहाज की ओर चल दिया। रास्ते भर अमला बिलकुल गुमसुम बैठी रही किन्तु शिव उसे तरह तरह से बहलाने की चेष्टा करता रहा। अमला ने जूरिच एयरपोर्ट पर उतर कर इतना ही कहा—

'शायद यह अच्छा ही हुआ शिव। मैं भी अपनी जिन्दगी से ऊब गयी थी।' उसके बाद तो दोनों के सुख की कोई सीमा ही न रही। बीच-बीच में दो-चार दिन को शिव जर्मनी भी चला जाता है। इसी बीच एक बार भारत भी एक सप्ताह के लिये बिजनेश देखने चला गया था। कभी-कभी अमला को कमला का ध्यान आ जाता था कि उसका क्या होगा। वह उसे एक बार मिल भी आई थी किन्तु शिव उसे बराबर तसल्ली देता रहा था कि कमला की कोई चिन्ता नहीं है और फिर कल तो वह आने ही वाली थी। आज शिव ने इन्टरलेकन सैर करने जाने का प्रोग्राम बनाया था। शिव को वह जगह बहुत ही पसन्द थी·····झीलों के देश में सबसे बड़ी झील की वह सुन्दरता देखते ही बनती थी·····चेयर लिफ्ट भी तो रास्ते में था जो कि शिव को बहुत पसन्द था। गुनगुनाते हुए ही शिव ने कार स्टार्ट करते हुए अमला से कहा—

'अब परसों कमला के साथ भी यहाँ आयेंगे·····

'हाँ, हाँ जरूर·····इसके बाद बहुत सी बातें होती रहीं, दोनों खिल-खिलाते रहे किन्तु अचानक रेस्टरां में डेढ़ बजे के लगभग जब दोनों भोजन करते बैठे तो अमला एकबारगी पीली पड़ गई थी·····शिव आनन्द से कट-लेट का एक टुकड़ा मुँह में डालते हुए मानों कुछ देख कर खुशी से कूद पड़ा।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

'अभी आया अमला !'

'क्या बात है ?'

'अरे वह है अजित, मेरा दोस्त.....'

अमला के चेहरे पर मानों एक बूंद भी रक्त नहीं रह गया था। वह काँप रही थी जान पड़ता था कि क्षण भर में बेहोश हो जायेगी.....कुछ ही देर में अजित को लेकर शिव उसी मेज पर लौट आया। प्रसन्नता से उफनते स्वर में उसने कहा—

'अमला, मेरा यूरोप का दोस्त अजित। मैं जब जर्मनी पढ़ने आया था तो हम लोग दो साल साथ रहे थे। यह मेरा बड़ा ही प्यारा और मजेदार दोस्त है। और अजित यह मेरी वाइफ अमला..... हैं..... .....हैं..... ..... तुम्हें क्या हो गया अमला.....' उसने अमला की कलाई पकड़ ली.....बड़ी मुश्किल से अमला ने कहा—

'मेरा दिल डूब रहा है। जल्दी चलो।'

'ठहरो मैं अभी केमिस्ट की सामने वाली शाप से कोरोमिन लाता हूं। माफ करना अजित तुम बैठो एक मिनट; और वह चला गया। अजित ने शिव के जाते ही बड़े दोस्ताना ढंग से अमला के सिर पर थपरी देते हुए कहा—

'तुमने बड़ा ही अच्छा किया अमला ! मेरी बधाई स्वीकार करो। कल मैं आया हूं और उस होटल में ही ठहरा हूं जिसमें तुम हो। वह शायद तुम्हारा ही बच्चा है। बड़ा प्यारा है।

अमला कठिनाई से कह पाई—

'तो यह पाप नहीं है ? तुमने मुझे माफ कर दिया ?'

'मैं सदैव ही तुम्हारा मित्र रहा अमला और आज भी हूं फिर शिव तो मेरा बहुत ही प्यारा दोस्त है। मेरी शादी तक वह लौटा नहीं था हिन्दुस्तान शायद दो-चार दिन पहले आया था फिर न जाने क्या हुआ कि उसका पता ही नहीं लगा। इन्वीटेशन तक नहीं भेज पाया। इसी से शायद हमारे सम्बन्ध वह नहीं समझ पाया पर अब तुम उसे बता सकती हो।'

शिव ने लौट कर पानी में दो चार बूंद कोरोमिन डालकर अमला को पिला दी। वह भी तब तक कुछ सम्हल चुकी थी। लौटते समय तीनों कार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

में साथ ही आ रहे थे। बहुत साहस करके अमला ने शिव से कहा—

'ये ही हैं मेरे देवता।'

'ओह, आई० सी०। और भला ऐसा दुनिया में कौन होगा ? और मैं भी खूब ही बेवकूफ बना। यार अजित लौट कर तुझे खत तक न लिख पाया था कि अमला की शादी सुन कर पागल सा हो गया। इसे बहुत समझाया लेकिन दो-तीनदिन ही तो रह गये थे शादी में। यह नहीं मानी तो मैं शहर बाहर हो गया। अगर जानता कि मालिक तू ही है तो तुझसे माँग ही न लेता। अमला, यह ऐसा ही औघड़दानी है ! याद है अजित एक दिन यह बड़े शौक से प्रोजेक्टर लाया और मैंने झटक लिया। यह बस हँस दिया।' और तीनों ही बड़ी ही मुक्त, बड़ी ही मीठी हँसी हँस दिए। शिव बड़ा प्रसन्न दिखाई दे रहा था। अजित के मन पर से भी जैसे भार सा उतर गया था। हँसी थमने पर अमला ने कहा—

'और तुमने इन्हें कभी कुछ नहीं दिया शिव ! बस छीना ही छीना है।'

'तुम्हारे शब्दों में है देवता। देवता को दे सकूँ इतनी शक्ति मुझमें कहाँ ? और देवता मुझसे लेगा ही क्यों ? बस इन्हें तो तुम्हीं एक प्रिय सी भेंट दे डालो।

'इन्हें दे सकूँ ऐसा मेरे पास है ही क्या ?' बड़ी भक्तिपूर्वक भावुकता से अमला नें कहा—

'क्यों कल तो तुम्हारी सबसे बहुमूल्य वस्तु, सजीव भेंट आ रही है। वही अजित को दे डालो। वह है भी इसी के योग्य। यह देवता वह देवी। क्यों अजित कमला अबस्थी का चित्र तो परसों के पेपर में देखा होगा फर्स्ट आई है इन्स्टीट्यूट आफ एजुकेशन में यार।'

'उन्हें जानता हूं।' बड़े सम्मान से अजित ने कहा—

'कमला मेरी सर्वाधिक प्रिय वस्तु है, देवता। उसे तुम्हारे चरणों मे भेंट कर सकूँ इससे अधिक मेरा सौभाग्य और क्या होगा ?

'क्यों मेरे साथ रहना तो शायद अभाग्य है ना ?'

'छीः, क्या बात करते हो ? बस हर समय मजाक।'

और तीनों प्रसन्न मन से हँस पड़ें। कड़ियाँ टूट गयीं।

———

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

Sri Pratap Singh
Library
Srinagar.

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

चिराग तले

सूर्य की किरण सी चमकी और छुप गई। क्लिक.....फिलिश.....खट.....और रश्मि की रसभरी आँखें न जाने क्यों गीली हो गईं.....चम.....चम.....चमचमाता हुआ गोल-गोल सुनहला मैडल उजले-उजले रङ्गीन चिकने-चिकने रिबन के सहारे लटकता हुआ ज्यों ही रश्मि के उजले-उजले गले को छूता हुआ सा उसकी उजली-उजली साड़ी के ऊपर पड़ा कि कि हाल तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा.....रश्मि की सुन्दर मदभरी आँखें चमकीं और कुछ बुझ सी गयीं.....उसके दोनों लाल-लाल होठ कुछ हिले.....कुछ खुले.....श्वेत दन्तपंक्ति कुछ चमकी और वह शायद मुस्कराई.....जरा सा.....संयमित सा.....हल्का सा.....लेडी झाबा वाला अपनी खास अदा से तनिक सा अपने सुन्दर छोटे से सिर को बाईं ओर झटका देकर मीठे-मीठे से स्वर में कह चुकी थीं "काँग्रेचुलेशन" और रश्मि भी न जाने कैसे कह चुकी थी होठों-होठों में शायद रस्मी तौर पर "थैंक्स" और फिर भाषण और थैंक्स चल रहे थे। यह उन दिनों की बात है जब रश्मि की दुनिया में बसन्त आने ही वाला था। जब वह चलती नहीं थी दौड़ती थी.....खड़ी नहीं होती थी उछलती थी.....हँसती नहीं थी खिलखिलाती थी और....और गाती नहीं थी फूल बिखेर दिया करती थी....और....और.... यह उन दिनों की बात है जबकि रश्मि की दुनियाँ बहार का इन्तजार सुबहों शाम किया करती थी.....जब उसकी हर अदा में ताजगी थी.....रह नाज में एक खास अन्दाज था और हर बात में फूलों की भीनी-भीनी सुगन्ध आया

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

करती थी ·····कालेज में म्यूजिक कौम्पीटीशन था·····नगर के सभी कालेजों की लड़कियां यहाँ तक कि लड़के भी आये थे·····संगीत महाविद्यालय, म्यूजिक कालेज, भातखण्डे विद्यापीठ, गन्धर्वसदन आदि कहाँ-कहाँ से विद्यार्थी आये थे कौन जाने और उन्हीं सब के बीच रश्मि ने बड़े अंदाज से गाया था छोटा सा, प्यारा सा, नन्हा सा·····एक गीत···गीत की बन्दिश सुना गया कि अच्छी थी, विहाग के स्वर·····रात का समां और रश्मि का मीठा-मीठा कुँवारा गला·····कौन था वहाँ जिसकी आंखें भर नहीं आई···· चित्रलिखित से बैठे रह गये श्रोता·····स्वयं लेडी झाबावाला भी भूल गई अपने आपको·····पन्द्रह मिनिट में उन्होंने एक बार भी तो पर्स खोल कर शीशा नहीं देखा·····सभी की आँखें गीली थीं और हृदय छूता-छूता···· सरल सुगम संगीत·····सीधे सादे बोल और विहाग के स्वर-संगीत क्या की तबलची झूम-झूम उठा·····रश्मि को फर्स्ट प्राइज मिला·····लेडी झाबा-वाला नेमैडल दिया·····और क्षणेक को उसकी ओर देखती ही रह गई····· इतना रूप·····ऐसा अद्भुत स्वर·····लेडी झाबावाला नगर की संगीत साहित्य सभा की प्रधाना हैं·····संगीत तो उनका जीवन है·····चित्रकला से उन्हें प्रेम है और साहित्य·····साहित्य में तो उनके प्राण बसते हैं····· जाते-जाते उन्होंने प्रिन्सीपल के सामने ही रश्मि से कहा था "यू मस्ट डेवेलप आर्ट दी माई चाइल्ड" और उसी दिन से, सचमुच उसी समय से रश्मि की दुनिया [illegible]ल गई·····उसका दौड़ना छुट गया·····उछलना बन्द हो गया·····खिलखिलाना रुक गया और रश्मि की साधना·····संगीत-साधना आरम्भ हो गई·····फिर तो न दिन था और न रात·····जज साहब की लाडली चार भाइयों की एकमात्र बहिन रश्मि सरस्वती की ही साधिका बनकर रह गई·····माँ कहती बेटा पढ़ा-लिखा भी करो। सिर्फ गाने-बजाने से ही तो काम नहीं चलेगा·····पिता हँसकर कहते क्यों तुझे क्यों फिक्र है मैं अपनी बिटिया को ऐसे घर दूँगा कि लोग उसके स्वर पर नाचा करेंगे·····माँ कहती लड़की कीजात थोड़ा घर का काम काज ही देख लिया कर·····पिता बिगड़ कर कहते मेरी रश्मि ऐसे घर जायेगी जहाँ फूलों से तौली जायेगी·····दस पांच नौकर उसका मुंह देखा करेंगे उसे क्या करना है काम-काज सीख कर····· रश्मि की आंखें भर आयीं·····कौन जानता है भविककता को·····औअ रश्मि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

उसी वर्ष संगीत विद्यालय से प्रथम श्रेणी में सर्वोच्च परीक्षा में उत्तीर्ण हुई और उसी वर्ष बी० ए० में फेल हो गई·····उसी वर्ष मां ने कहा—बड़ी हुई, अब इसका ब्याह-शादी की भी कुछ फिकर करोगे कि नहीं·····पिता ने कहा—अरे अभी तो मेरी बिटिया नन्हीं-सी ही है अभी से क्या ब्याह-शादी····· रश्मि हँसी भी थी और रोई भी थी और फिर उसी वर्ष उसकी विधवा चाची अपने चार बच्चों को लेकर उन्हीं के घर रहने आ गयी थीं·····और फिर उसी वर्ष उसके पिता ने दो नौकरों में से एक को कम कर दिया था·····नई कार लेने का विचार भी छोड़ दिया था और·····और·····"कुमारी बिमला मजूमदार" चपरासी ने आवाज दी ·····रश्मि हिल गई। उसके स्वप्न भङ्ग हो गये। उसके पास बैठी हुई एक मोटी सी महिला उठकर भीतर की ओर इण्टरव्यू के लिये चली गई·····रश्मि आधे घण्टे से बैठी है·····वह फिर अपने स्वप्नों में डूब गई·····फिर उसकी कोई नई साड़ी नहीं आई·····पापा उदास से दीखने लगे·····मम्मी कुछ-कुछ परेशान सी रहने लगीं·····और चाची बेचारी तो रात-दिन रोती ही रहती थी·····रश्मि का जी चाहा कि चीखकर रो पड़े·····पर वह सम्हल गई·····वह तो इण्टरव्यू पर आई थी ना·····और यह अबकी बात है जब कि वह दौड़ती नहीं घिसटती है, उछलती नहीं सरकती है·····खिलखिलाती नहीं सिसकती है·····कब कैसे हो गया यह सब·····और फिर उसी वर्ष·····एक इन्टरनेशनल क्लब से टेलीफोन आया·····टेलीफोन क्या आया कयामत बरपा हो गई····· और····· और····· रश्मि की दुनियां में बहार आये बिना ही खिज़ाँ आ गई·····पापा उसे किसी भी घर में देने से पहले दुनियां से चले गये····· तड़फती, चीखती, चिल्लाती मां·····छाती कूटती, बाल नोचती चाची····· सिसकते सात बच्चे और रश्मि·····रश्मि जो सबसे बड़ी थी····· रश्मि जो सबसे समझदार थी·····रश्मि जो सबसे लाड़ली थी·····अब कहाँ जाये रश्मि की माँ····· जज साहब थे तो सिविल जज लेकिन वेतन ही कितना होता है। तिस पर शौकीन मिज़ाज·····पैसे से तो जैसे दुश्मनी थी·····बस कोई सामने आकर गिड़गिड़ा भर दे फिर पत्नी चाहे चीखती रहे, चाहे चिल्लाती, उसकी सहायता अवश्य होगी और होगी·····फिर भला 'दिरो दाम अपने पास कहाँ, चील के घोंसले में मांस कहाँ' ले दे के प्रावीडेन्ट फण्ड

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

और इन्शोरेन्स·····वह भी भला कितना सा था·····मां ने सोचा कि भाई के घर ही जा पड़ें लेकिन वहाँ भी क्या था ? भाई का अपना ही गुजर कहाँ हो पाता था·····बड़ा शहर·····बड़ा घर·····बड़े नाम और आमदनी थी ही कितनी·····इधर लड़का इन्जीनियरिंग के अन्तिम वर्ष में पढ़ रहा है। क्या करे क्या न करे ? बेचारी सद्यविधवा को रोने का भी तो अवकाश नहीं था·····कहाँ होता है रोने का अवकाश इस देश के अधिकांश मध्यवर्ग के घरों की बाल-बच्चों वाली, गृहस्थी वाली विधवाओं को·····तिस पर गृहस्थी भी तो छोटी नहीं थी·····बेचारी न पढ़ी अधिक, न लिखी, करे भी तो क्या करे ? पार्टियों का सलीका निभा लेती थी, क्लब में जाकर हँस बोल लेती थी लेकिन नौकरी·····काम-काज तो कभी किया नहीं·····जहाँ जाती थी सोशल वर्क करना पड़ता था लेकिन सोशल वर्क तो सभी कर सकते हैं·····बड़े आदमियों की पत्नियां सोशल वर्क तो करती ही हैं····· जज साहब की मृत्यु पर नगर के प्रायः सभी प्रमुख व्यक्ति आये थे·····पत्र भी आये थे·····'बार' में शोक प्रस्ताव भी पास हुआ था लेकिन····· लेकिन·····

चिन्ता से रश्मि की माँ सो नहीं पाती थी, उसकी चाची को तो मत्था पीटने से ही फुरसत कहाँ थी और·····और अचानक एक दिन रश्मि अपने कालेज चली गई प्रिन्सिपल से मिलने·····

"श्रीमती सरला मथुर" रश्मि जैसे नींद से चौंक पड़ी·····उसका गला सूख रहा था·····उसे जान पड़ा कि वह बुरी तर काँप रही है·····नर्वस हो रही है·····उसकी आँखें जल रहीं थीं·····उसने चाहा कि वह चपरासी से माँगकर एक गिलास पानी पी ले लेकिन वह चपरासी को बुला नहीं सकी·····खुद भी उठ नहीं सकी·····उसे जान पड़ा कि किसी ने उसे कीलों से सीट के साथ जड़ ही तो दिया है·····वह स्वप्नों में····अतीत के चित्रों में डूब गई·····डूबती ही चली गई·····

"रश्मि ! तुम तो साक्षात् सरस्वती हो·····"

"क्यों उसे इतना चढ़ा रही हैं लेडी साहिबा" उसकी ममी ने नम्रता से किन्तु मन ही मन प्रसन्न होते हुए कहा था·····उस दिन लेडी झाबावाला का छोटा बेटा यू० एस० ए० से लौटा था और उसी की खुशी में पार्टी हो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

रही थी। रश्मि भी मामा, पापा के साथ पार्टी में निमन्त्रित थी·····यंग मास्टर झाबावाला के अनुरोध पर रश्मि ने एक गीत गाया था और सभी ने तो प्रसंसा की थी·····मास्टर झाबावाला ने तो यहाँ तक कहा था कि यदि वह यू० एस० ए० में होती तो उसके स्वर सम्मोहन की कद्र होती और फिर कैसे वह पार्टी भर उसके आगे-पीछे घूमा किया था·····लेडी झाबावाला संगीतप्रेमी है, कलाप्रेमी है·····सर साहब के जीवनकाल में तो शिकार प्रेमी भी थीं और भी न जाने क्या क्या प्रेमी थीं किन्तु आज भी नगर की प्रायः सभी प्रमुख सस्थाओं की प्रधाना अथवा उप-प्रधाना अवश्य हैं····· उस ओर दिन प्रिन्सपल ने रश्मि की अवस्था सुन कर कहा था "रश्मि, यहाँ एक पोस्ट खाली हुई है। तुम एप्लाई कर दो। सेलक्ट तो तुम हो जाओगी क्योंकि लेडी झाबावाला और मास्टर झाबावाला दोनों तुम्हारा गाना सुन भी चुके हैं और पसन्द भी करते हैं, लेकिन·····रश्मि ने स्नेही, हितचिन्तक वृद्ध प्राय अपनी प्रिन्सिपल की आँखो में झाक···· ···वहाँ स्नेह था, शंका थी और थी तनिक सी परेशानी·····'लेकिन' वहीं छुट गया। उन्होंने फिर कहा—'कोई बात नहीं·····तुम एप्लाई कर दो·····"और आज रश्मि संगीत अध्यापिका के लिये होने वाली नियुक्ति के सिलसिले में इण्टरव्यूमें आई थी·····वहाँ क्या पूछेंगे वे लोग·····क्या होगा इण्टरव्यू में····· रश्मि के उदास चेहरे पर एक विशेष प्रकार की कोमलता, तरलता छा गई·····वह और भी अधिक उदास हो गई·····और कुछ ही देर में जब वह कमरे के अन्दर थी तो लेडी झाबावाला कह रही थी····· "रश्मि जी, दखिये हम लोग तो आर्ट को पेट्रनाइज करते हैं। पिछले साल ही मैंने सत्ता-इस सौ की तस्वीरें गोपेश वर्मा की बे जरूरत ही उस बेचारे को बस मदद करने को खरीद ली थीं। पर यह तो संस्था का मामला है। आपको यदि हम लोग रख भी लें तो सौ से अधिक तो नहीं दे सकेंगे·····वृद्धप्राय प्रिन्सिपल ने मोटे शीशे की ऐनक को नाक पर तनिक ठीक करते हुए शब्दों को सम्हाल-सम्हाल कर कहा—"ग्रेड तो एक सौ बीस से शुरू है·····"

"ठीक है लेकिन इन्हें तो अस्सी भी नहीं मिलने चाहिए···यह ग्रेजुएट भी नहीं और ट्रेन्ड भी नहीं·····लेडी साहब चीख उठीं·····प्रिन्सिपल साहिबा सहम गयीं फिर भी उन्होंने कहा'—'लेकिन म्यूजिक में तो क्वालीफाइड है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"उससे क्या ?" लापरवाही से लेडी साहिबा बोलीं।

"और इस समय जरूरत भी तो है।" सहानुभूतिपूर्ण स्वर से रश्मि की आँखों में आँसू भर आये·····

"क्वालीफाइड तो बहुत मिल जायेगी·····देखिये मिसिज शर्मा आप कालेज के फाइनेन्सेस का भी ध्यान रखा करें·····यह बहुत गलत बात·····

"ममी ! हमें आर्ट की कद्र करनी चाहिए। जब प्रिन्सिपल की यही राय है तो एक सौ बीस ही दे दो·····आर्ट को पेट्रनाइज़ तो करना है।" यंग झाबावाला रश्मि की ओर देख रहा था एकटक बड़ी देर से।

"अच्छा, रश्मि जी आप बाहर ठहरें। हम अभी निश्चय करके बतायेंगे·····"

रश्मि को अधिक देर तक ठहरना नहीं पड़ा। कुछ ही देर बाद मास्टर झाबावाला ने आकर कहा—"रश्मि जी ! आपका एपाइन्टमेन्ट हो गया, एक सौ बीस पर। आप कल से ज्वाइन कर लें।"

"थैंक यू वेरी मच" रश्मि की आँखें एक बार फिर से गीली हो गयीं···· बेचारे ने उसके लिए न जाने किस तरह ममी को राजी किया होगा। सच ही वह तो जान पड़ता है कि कलाप्रेमी है·····भला आदमी है·····

"चलिये, आपको घर पहुंचाता चलूँ·····मुझे भी उधर ही जाना है। ममी को तो अभी बहुत काम है।"

"आप क्यों कष्ट करेंगे ? मैं चली जाऊँगी।" रश्मि ने उदास स्वर से कहा।

"नहीं, नहीं, दैट्स नो ट्रबल, इट विलबी माई प्लेज़र·····

रश्मि देख नहीं पाई कि उसकी पीठ के पीछे दो-तीन जोड़ी आँखें मुस्करा रही थीं·····दो-तीन होठ वक्र से होकर रह गये थे·····

(२)

"रश्मि जी, हमारे क्लब में एक ड्रामा हो रहा है और उसकी हीरोइन बनना ही होगा।"

"मुझे तो एक्टिंग करना ही नहीं आता मिस्टर झाबावाला !" स्वर उदास था कुछ-कुछ बुझा सा भी।

"हीरोइन को अधिकतर गाना ही है और हमें कोई गाने वाली हीरोइन मिल हीं नहीं रही है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"माफ कीजिये, यह तो नहीं कर सकूँगी।"

मिस्टर झाबावाला ने आँखों में एक प्रकार की हिंसक चमक भर कर कहा—"यह तो आप को करना ही पड़ेगा रश्मि जी। बस मेरी इतनी सी बात रख लें। मैं क्लब में सबसे कह चुका हूं कि मेरी बात को वह इनकार करके नहीं टालेंगी।"

"आपका ड्रामा बिगड़ जायगा।"

"आप जानती नहीं हैं कि मैं आपकी कितनी कद्र करता हूं। कैसे दिल चीर कर आपको दिखाऊँ?" रश्मि समझ नहीं पाई कि कद्र की बात कहाँ से आ गई थी किन्तु उसे याद आ गया एक दिन प्रिन्सिपल ने कहा था "रश्मि! मास्टर झाबावाला से बनाये रखना। वही तुम्हारा रक्षक है।" ·····रक्षक·····रश्मि·····उसकी ममी·····उसकी चाची····उसके सात छोटे-छोटे भाई-बहिन·····उसके एक सौ बीस रुपये·····इन्शोरेन्स की रकम से एक मकान खरीद लिया था·····थोड़ा सा पोर्शन किराये पर भी दे दिया था। उससे भी पचास रुपये मिल ही जाते थे·····नौकरी····· नौकरी·····संगीत में अद्भुत प्रतिभा, मीठा स्वर, कला·····आर्ट····· नौकरी····रेडियो पर कभी-कदास एक-आध प्रोग्राम मिल जाता था पर उन दस-बीस रुपयों से होता ही क्या है·····और दूसरे दिन से रश्मि क्लब में मास्टर झाबावाला के साथ रिहर्सल के लिये जाने लगी थी·····

उस दिन सन्ध्या से ही हल्की-हल्की बूंदें पड़ रही थी। इधर रश्मि में आत्मविश्वास आता जा रहा था। सभी कहीं तो उसकी प्रशंसा थी। उसकी छात्राएँ तो उस पर जान देती थीं। प्रिन्सिपल भी अत्यधिक प्रसन्न थी। उसने प्राइवेट बी० ए० की परीक्षा दे डालने का भी निश्चय किया था। अगले वर्ष शिशिर भी इन्जीनियर होकर आ जायगा। तब फिर रश्मि एक बार फिर कालेज ज्वाइन करके एम० ए० भी कर डालेगी·····वह रिसर्च करेगी संगीत में·····रश्मि डाक्टर रश्मि·····वह खिलखिल उठती थी···· शिशिर स्कालरशिप पर और पापा के बाद फ्रीशिप लेकर पढ़ रहा है····· वह भी बी० ए० में खूब परिश्रम करके खूब ढ़ेर सारे नम्बर लेकर स्कालर-शिप पायेगी·····प्रिन्सिपल तो कह रही थी कि वह बी० ए० कर ले तो उसे यूनियन गवर्नमेन्ट से संगीत में रिसर्च करने के लिए ढ़ाई सौ रुपये महीने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

का स्कालरशिप मिल जायेगा·····रश्मि के सामने क्लब में मेज पर गिलास रखे मास्टर झाबावाला चुपचाप बैठा था·····कभी-कभी एक-आध सिप ले भी लेता था। और अभी कोई भी तो नहीं आया था।

"रश्मि ! तुम इतनी उदास क्यों रहती हो ? जानती हो कि तुम्हें उदास देखकर मेरे दिल की क्या हालत हो जाती है ?" रश्मि चौंक पड़ी। वह अक्सर इसी तरह चौंक पड़ती है। वह दिवा स्वप्न देखती रहती है।

"पार्डन" स्वर में क्षमा-प्रार्थना स्पष्ट थीं।

"तुम इतनी एबसेन्ट माइन्डेड क्यों रहती हो ? मैं तुम्हें हँसती हुई, खिली-खिली सी देखना चाहता हूं·····तुम एक बार हुकुम तो करके देखो कि मैं तुम्हारे लिये क्या कर सकता हूं।" उसकी ललचाई हुई युवादृष्टि तीखी-तीखी गहरी नजर रश्मि की सूती फिरोजी साड़ी के भीतर उसकी····· उसके शरीर की गोलाइयों को नग्न किये डाल रही थी·····

"आपकी कृपा की आभारी हूं मिस्टर झाबावाला। मुझे कष्ट ही क्या है ?"

गिलास में उठते हुये सुनहले झागों में थिरक गई एक·····एक····· पुरानी सी नारी प्रतिभा·····जूरिच की वह तूफानी रात·····और यंग झाबावाला के कुंवारे·····अछूते·····कभी भी पूरे न होने वाले छिछले-छिछले से, उथले-उथले से वायदे·····उसने एक लम्बी साँस लेकर एक घूंट भरा·····नजरें ऊपर उठीं और दो मासूम नजरों से मिल गईं·····गिलास की परी·····जूरिच की तूफानी रात की मलिका·····और·····और····· फिर उसके अजन्मे बच्चे की मां·····

"चलिये कहीं घूम फिर आयें·····" रश्मि को कुछ अच्छा नहीं लग रहा था·····वे तीखी-तीखी सी नजरें उसे चुभ रही थीं·····उनकी कड़वी-कड़वी गहराइयां मानों उसे उघाड़े दे रही थी·····

"शायद आज अब कोई नहीं आयेगा। ममी अकेली हैं। चाची भी कही गई हुई हैं। मुझे घर पहुंचा आइये।" और झाबावाला मुस्करा दिया····· चमचमाती नयी कैडलक का दरवाजा खोलकर झाबावाला ने न जाने कैसे से स्वर में कहा—"मेरी मलिका, आओ" और न जाने क्यों रश्मि सिर से पैर तक कांप उठी ·····"यही तुम्हारे रक्षक हैं·····मित्र हैं·····सहायक हैं·····" और रश्मि की उदास नजरें भयभीत हो उठीं·····रश्मि

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

चुपचाप ड्राइवर की सीट के पास जाकर बैठ गई। झाबावाला स्वयं कार ड्राइव करता था और कुछ क्षणों में कार हवा से बातें कर रही थी·····

और फिर तीसरे दिन रश्मि को नोटिस मिल गया एक माह का। वह अनट्रेन्ड थी ना और ग्रेजुएट भी नहीं थी अतः उसे कैसे रखा जा सकता था। शिक्षा विभाग का ऐसा नियम भी तो नहीं है। लेडी झाबा वाला प्रेसिडेन्ट आर्ट की पेटरन अवश्य हैं लेकिन कालेज की प्रेसिडेन्ट भी तो हैं। नियम विरुद्ध काम थोड़े ही करेंगी और भी तो बात है। वह कुछ करती भी तो नहीं थी·····एक्सट्रा कैरीकुलर एक्टीविटी में तो जरा भी इन्टरेस्ट नहीं था·····भले ही प्रिन्सिपल कुछ भी कहें लेकिन प्रेसिडेन्ट क्या जानती नहीं हैं और अब तो गले में वह मिठास भी नहीं है·····गाती क्या हैं मानों रो रही हैं·····सूरत है सो रोनी-रोनी सी अलग·····उन्हें कला की उन्नति करना है उसे नष्ट थोड़े ही कराना है।

स्टाफ रूम में जिसने सुना वही मुस्करा दी·····मां ने रश्मि से कहा—"बेटी अब क्या होगा ?"

रश्मि की सुन्दर आँखों में घिरी-सावन भादों की घटाएँ बरस उठीं···· वह क्या कहती·····किससे कहती·····उसकी आँखों की उदासी घट नहीं सकती और उन्हें चाहिए उसकी आँखों की मुस्कराहट किसी भी मूल्य पर, उस मूल्य पर जो कि वह दे नहीं सकती·····किसी तरह भी नहीं दे सकती·····

और फिर एक दिन रश्मि ने पड़ोसी के घर पड़े हुए समाचार पत्र में पढ़ा कि लेडी झाबावाला संगीत, कला एवं साहित्य की विशेष संरक्षिका होने के कारण विशेष रुचियों का विशेष प्रतिनिधित्व करने तथा समाज सेविका होने के कारण समाज सेवा के कार्य का और भी अधिक प्रसार करने के लिये काउन्सिल में नामजद कर दी गई·····और उसी दिन दोपहर का जब वह दूर के मोहल्ले से ट्यूशन पढ़ा कर लौट रही थी तो उसने नगर के प्रसिद्ध रेस्टरां से निकल कर कैडलक, चमचमाती हुई नयी कैडलक का ओर बढ़ते हुये मास्टर झाबावाला को देखा खिले हुए फूल की तरह खिल-खिलाते हुए उनकी कीमती कपड़े की कमाज से ढंकी हुयी बांह का सहारा लिये हुए थी एक अर्धखिली सी गुलाबी-गुलाबी कली सी सुकुमारी अरुणा·····

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

रश्मि की संगीत विद्यालय की जूनियर जो कभी ठीक से गा भी नहीं पायी थी और न जाने कैसे अन्तिम वर्ष तक पहुंच कर पास भी कर गई थी..... रश्मि ने पड़ोस की लड़कियों से सुना था कि नयी संगीत अध्यापिका स्वयं तो कभी गाती ही नहीं हैं.....शायद.....बेसुरी भी हैं.....लेकिन लेडी झाबा-वाला कहती हैं कि नयी संगीत अध्यापिका संगीत की सच्ची पुजारिन है.....काम भी बहुत अच्छा करती है यह दूसरी बात है कि प्रिन्सीपल उससे चिढ़ी रहती हैं लेकिन उससे क्या ? लेडी झाबा-वाला एम० एल० सी० प्रसीडेन्ट हैं, कला की पारखी हैं, समाज-सेविका हैं.....वे ठीक ही कहती होंगी.....

रश्मि की आँखों से आग बरस रही थी लेकिन कुछ ही क्षणों पश्चात् वे दोनों तो एयर कन्डीशन्ड कमरे में बैठे ठंडे शरबत की चुसकियां ले रहे थे.....अरे भई विद्यालय की अध्यपिकाओं को मन्त्री से सलाह मशवरा तो करना ही होता है.....ये दूसरी बात है कि अध्यापिकाएँ अदा से एक चोटी पीछे फेंक कर आती हुई अरुणा को देख कर मुस्करा देती हैं किन्तु वह योग्य है.....उसे उचित वेतन मिलना चाहिये.....भला एक सौ बीस में होता ही क्या है कम से कम डेढ़ सौ तो मिलने ही चाहिए.....अरे इण्टर तक ही पढ़ी हैं तो क्या उसकी योग्यता तो बहुत है और हमे योग्यता देखना है न कि परीक्षा का हिसाब रखना.....यू० एस० ए० में सिर्फ सार्टिफिकेट नहीं देखा जाता है ना.....

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

धुंधली रेखाएं

चौंक कर पीछे देखते ही उसके क्रोध से विकृत होठों पर मुस्कराहट फैल गई·····फैल कर रह गई·····फैली-फैली आँखों में विस्मय भरे वह तनिक भयभीत सी उसी को ओर देख रही थी·····देखे जा रही थी पर तनिक भी हिल नहीं रही थी·····उसे उसका भाव बड़ा ही सुन्दर लगा·····उसका जी चाहा कि कैमरा खोल कर क्लिक कर दें किन्तु इतने में ही भाग कर वह एक पेड़ के पीछे छिप गई·····न जाने क्यों यह हाथ का कैन्वेस बोर्ड समेत धरती पर फेंक कर उसके पीछे भागा·····शायद उसने भी यह देख लिया था·····वह पेड़ की आड़ छोड़ कर तालाब की ओर भागी·····यह ठहर गया·····उसने मुड़ कर देखा और वह भी ठहर गई·····अचानक इसने दौड़ कर उसको पकड़ लिया·····और वह अपने आप को छुड़ाने की कशमकश में उलझ गई शायद वह भयभीत थी····शायद वह घबरा रही थी····· शायद वह·····शायद वह·····उसने देखा कि उसका नन्हा-सा शरीर दो बलिष्ठ बाहों के बीच कैद हो गया था·····उसने देखा कि उसके दो छोटे-छोटे हाथ दो भरपूर हाथों के बीच कस लिये गये थे और वह रो पड़ी····· पकड़ ढ़ीली हो गई·····इसने पूछा -"तुमने मुझे पत्थर क्यों मारा ?"

"तुम्हें·····आपको थोड़े ही मारा था·····मैं तो वह आम तोड़ रही थी·····" सिसकियों के बीच उसने कहा·····ठीक ही तो वह आम के पेड़ के नीचे बैठा था ·····उसके सिर के ऊपर ही कच्चे आम लगे थे और····· और·····लेकिन उससे क्या उसकी पीठ पर ढेला लगा था·····उसका हाथ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हिल गया था .....ब्रश हिल गया था और उसकी छः-सात दिन की मेहनत बेकार हो गई थी.....उसने चाहा कि उसे खूब क्रोध चढ़ आये और वह इस ढीठ लड़की की भली प्रकार मरम्मत कर दे.... ....अच्छी तरह से उसे बता दे कि वह इस प्रकार का उदण्ड व्यवहार नहीं सह सकता.....लेकिन सहसा उसकी ओर देख कर वह हँस पड़ा वे अख्तियार.....अनजाने..... अनचाहे अब लडकी का डर कुछ कम हो गया था.... ...उसने अपने दोनों हाथ छुड़ा कर भाग जाना चाहा लेकिन ललित ने उसे और भी कस कर पकड़ लिया.....

'ठीक लेकिन आम पर ढेला चलाते - चलाते मेरी पीठ पर कैसे पड़ गया.....''

"सो मैं क्या जानूं ?" उसने कुछ ऐसे भोले-भाले अन्दाज से कहा कि ललित ने हँस कर उसे गोद में उठा लिया।

"मुझे छोड़ दो, ममी डाँटेंगी"

"कहाँ हैं तुम्हारी ममी ?"

"वह क्या हैं उस झुरमुट के पीछे.....ममी, पापा, जीजी, भैया सभी हैं और हमारे सत्तो अंकल भी हैं, आँटी भी हैं....."लड़की बड़े इत्मीनान से कह रही थी।

"तुम्हारा नाम क्या है ?"

"क्यों ! मेरा नाम नहीं जानते ?....अरे कैसे जानोगे ?.....मेरा नाम है पम्मा....."

इतने में एक घबराई हुई सी अधेड़ स्त्री उधर ही आती दिखाई दी। पास आकर उसने कुछ झुंझलाहट से कहा—"कैसी बिटिया हो ? उधर सब लोग घबरा रहे हैं और यह गोद में चढ़ी बातें बना रही है।"

"आया.....मैं भाग रही थी इन्होंने पकड़ लिया।" ललित ने उसे गोद से उतार दिया था और लड़की आया के साथ चली गई किन्तु कहती गई "तुम हमारे घर आना ! भला ?" ललित चुपचाप उस जाती हुई लड़की की पीठ पर फैली घनी केशराशि देखता ही रहा.....नन्हीं सी मुन्नी-प्यारी-प्यारी सी बच्ची उसे बहुत ही भली लगी थी.....यह उन दिनों की बात है जब ललित चुनाव में प्रथम आकर इंजीनियरिंग कालेज में दाखिल हुआ ही

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

था·····नयी जगह·····नया वातावरण, न कोई मित्र·····न परिचित····· मन कुछ यों ही उदास-उदास सा रहता था किन्तु उपाय ही क्या था····· अतः वह रविवार को प्रातः ही खाना आदि साथ लेकर ड्राइंग बोर्ड बगल में दबाये रंगों का डिब्बा आदि थैले में डाल कर यहीं आ जाया करता था····· चित्रकला का उसे शौक है·····शौक नहीं सनक है·····खब्त है·····पागल-पन है·····उनकी ममी कहा करती हैं कि ड्राइंग पेन्टिंग में तो ललित की जान बसती है·····इतने बड़े विश्व में ललित का अपना कहने को कोई भी नहीं है·····एक भी तो नहीं है····· जन्म लेते ही वह मां को खा बैठा····· तीन वर्ष का होते न होते पिता का देहान्त हो गया·····मां के एक मुँह बोले भाई और मामी ने उसे पाला, पलोसा·····बड़ा किया·····मामा के कोई बच्चा नहीं था·····जो हुए भी वे जाते रहे अतः मामा-मामी अपना सारा प्यार उसी पर उँडेला करते थे·····यूँ कहने वाले तो यह भी कहते हैं कि उसके पिता अपना काफी धन अपने इन्हीं मित्र को अपने एकमात्र बालक के लालन-पालन हेतु दे गये थे और उसी से आज उनकी हैसियत भी थी। गत वर्ष जब ललित एफ० एस०-सी० की परीक्षा दे रहा था तो उसकी मामी भी तीन-चार दिन बीमार रह कर ही चल बसीं और फिर ललित ने गहरी उदासी के बीच अपना परीक्षा परिणाम सुना कि वह फर्स्ट क्लास पा गया है और उसी बीच बी० एस०-सी० में दाखिल भी हुआ। पर जी तो जैसे लगना ही नहीं था अतः इंजीनियरिंग कालेज की प्रवेश प्रतियोगिता में बैठ गया और अब यहां आ गया। मामी के बिना घर उसे काटे खाता था और यहाँ भी जी कहाँ लगता है। यहीं एक पेड़ के नीचे बैठा चित्र बना रहा था, कई दिन से और ज्यों ही चित्र पूरा होने को आया कि उसकी पीठ पर खटाक से एक ढेला आ लगा·····चौंक पड़ा·····हाथ हिल गया···रँग भरा ब्रुश हिल गया और चित्र बिगड़ गया·····क्रोध से झुंझला कर देखा तो उस मासूम नन्हीं सी आठ-नौ साल की प्यारी सी लड़की को देखता ही रह गया और यह तो तब की बात है जब वह बच्ची थी और यह थी उन लोगों की पहली मुलाकात।

(२)

तब वह इंजीनियरिंग के तीसरे वर्ष में था। न साथी-संगी की कमी थी और न मित्रों का अभाव था। उस दिन नगर में अमेचर आर्टिस्ट की चित्र-

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कला की प्रदर्शनी थी। ललित के दो-तीन चित्र भी प्रदर्शनी में लगे थे। अमेचर आर्टिस्ट क्लब के मंत्री ने ललित का परिचय बड़े चाव से कराया। नगर के प्रमुख उद्योगपति जयकृष्ण दास गुप्त से किन्तु ललित की दृष्टि जाकर टिक गई श्रीयुत गुप्त के पास खड़ी एक ग्यारह-बारह साल की लड़की पर, चेहरा परिचित था, मुस्कराती आँखों की जिन्दगी भरी शरारत परिचित थी किन्तु स्मरण आ ही नहीं रहा था कि उसने उसे कब और कहाँ देखा था····· बातचीत होती रही·····सभ्यता के नाते गुप्त जी ने जाते समय ललित और एक दूसरे आर्टिस्ट किशोर को अपने घर आने का निमंत्रण दिया·····और अचानक ललित की स्मृति में कौंध उठी·····तीन साल पूर्व एक शरारती लड़की·····वे आँखें·····

"तुमने मुझे पत्थर क्यों मारा ?"

"तुम्हें, आपको थोड़ ही मारा था। मैं तो वह आम तोड़ रही थी·····"

"मुझे छोड़ दो ममी डाँटेंगी"

"क्यों ? मेरा नाम नहीं जानते·····अरे कैसे जानोगे—मेरा नाम है पम्मा·····" ललित अपने आप मुस्करा दिया·····उसका मित्र कह रहा था—"गुप्त जी के घर अवश्य आना। वे बड़े भारी कलाप्रेमी हैं·····"

"उससे क्या ?"

"उनकी न जाने कितनी तो मिलें हैं। सैकड़ों तो इंजीनियर काम करते हैं·····" कह कर वह मुस्करा दिया·····और ललित न जाने क्या सोचता रहा।

(३)

"क्या आप सचमुच उस दिन मुझे मारते ?"

"नहीं तो, क्यों ?"

"मुझे उस रात को बहुत रोना आया कि मैंने आपकी तस्वीर बिगाड़ दी और आपने मुझे मारा भी नहीं। लल्लू तो जरा से कसूर पर मार देता है।"

"तुम जैसी प्यारी बिटिया को कहीं मारा जाता है।" और न जाने क्यों तेरह वर्ष की वह बालिका झेंप गई·····ललित का गुप्त जी के घर पिछले दो वर्षों में आना-जाना बढ़ता ही गया। लल्लू तो ललित के बिना शाम गुजार ही नहीं पाता था किन्तु ललित की पढ़ाई समाप्त हो गई थी। उस

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

प्रथम आने पर स्कॉलरशिप भी मिल गया था और उसे कुछ ही दिनों में दो वर्ष के लिये जर्मनी भी चले जाना था। मामा तो भेजना ही नहीं चाहते थे किन्तु यह तो उसके भविष्य का प्रश्न था अतः उसे जाना ही होगा। और पम्मी उर्फ प्रमिला उस समय नवीं कक्षा में पढ रही थी·····भावुक पम्मी को ललित की बातें बहुत ही अच्छी लगती थीं·····लल्लू भैया तो पहले मारते थे अब भी डाँटते हैं·····ममी शाम को कभी क्लब चली जाती हैं और कभी सोशल वर्क करने·····पापा को तो फुरसत ही नहीं मिलती और जीजी, उसकी बड़ी जीजी सुसराल से आ ही नहीं पाती हैं·····ललित भैया के सामने लल्लू भैया भी नहीं डाँटते अत. उसे ललित बहुत ही भला लगता है····· और पम्मी उससे बहुत बातें करती है किन्तु वह प्यारी सी लड़की है लेकिन फिर भी उसे लल्लू भैया डाँटते हैं·····वह प्यारी सी लड़की है फिर भी ममी उसे अभी तक साड़ियाँ पहनने के लिये नहीं देतीं·····वह प्यारी सी लड़की है और फिर भी पापा उसे क्लब नहीं ले जाते लेकिन ललित उसे नहीं मार सकते थे क्योंकि वह प्यारी लड़की है और फिर पम्मी झेंप गई····· लल्लू ने चिढ़ाते हुए कहा—"हाँ, बड़ी प्यारी है·····भूतनी है, भूतनी" और पम्मी रूठ गई और फिर ललित को किस-किस तरह तो उसे मनाना पड़ा····· लल्लू तो उसे यूँ ही चिढ़ाता रहता है ? उसने कहा भी "जाने दीजिये ललित भाई, यह तो यूँ ही तुनक मिजाज नखरे वाली है, कौन इसके नखरे सहे" ललित ने मुस्करा कर कहा—"भाई, कोई तो मिलेगा ही इसे, इसके नखरे सहने वाला"

"आप बहुत वो हैं" कह कर पम्मी भीतर भाग गई। लेकिन थोड़े ही देर में नौकर के साथ चाय का सामान लेकर फिर लॉन में आ गई।

"ललित भैया ! देखिये यह चीज सैन्डविच आज मैंने आपके लिये खुद बनाई है। सारी खानी पड़ेगी ?"

"हाँ, हाँ, ललित भैया को रिश्वत दे दे ताकि मेरे घूँसे से तेरी पीठ की रक्षा हो सके।"

"लेकिन मेरी पीठ की तो इन्होंने पत्थर से खूब मरम्मत की थी पहले ही दिन।" तीनों खिलखिलाकर हँस पड़े। पम्मी ने रूठ कर कहा—"आप वही बात याद दिला-दिला कर शर्मिन्दा करते हैं अब मैं आप से कभी नहीं बोलूँगी।" और वह रूठ गई·····

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"रूठी बिटिया कौन मनाये, लड्डू पूरी कौन खिलाये.....जाने दो लल्लू अब हम एक भी सैन्डविच नहीं खायेंगे....."

"आप बड़े बुरे हैं ललित भैया....."

"और आप बड़ी अच्छी हैं पम्मी रानी....." कहने के ढंग पर सब हँस पड़े और दिन बीतते ही चले गये.....बीतते ही चले गये.....

(४)

"स्वीटी, आफीदा ज़ेल" कह कर वह आगे बढ़ गया.....वह देर तक अपलक उसे देखती रही.....कैसा है यह विचित्र युवक.....प्रतिदिन नाइट क्लब के पहले चरण में आता है.....उसे खिलाता-पिलाता है, उसके साथ नृत्य करता है.....वे लोग घण्टों बातें करते हैं अपने अपने कामकाज की..... घरबार की.....दीन-दुनियाँ की.....वह सेल्सगर्ल है और ये इंजीनियर दोनों दिन भर कड़ी मेहनत करते हैं.....शनिवार की संध्या और रविवार की सुबह भी कभी-कभी दोनों देर तक साथ बिताते हैं.....पिछले वीक-एण्ड पर दोनों बड़े उत्साह से ब्लैक फारेस्ट जाने का प्रोग्राम बनाते रहे.....कालेन और बोन तो न जाने कितनी बार हो आये साथ-साथ.....जलमार्ग पर एक ही यान में पास-पास बैठ कर दोनों ने कितने ही गीत गाये होंगे फिर भी.....फिर भी.....लेकिन वह उससे चाहती क्या है ? उसके घने काले बाल, उसकी गहरी काली आँखें, उसके बलिष्ठ हाथ इसे कितने पसन्द हैं..... और इसके बनाये हुए केक उसे कितने पसन्द हैं.....उन दोनों के और भी मित्र हैं किन्तु इसे और तो कोई इतना अच्छा नहीं लगता और कितना उदार है यह.....कितना भला.....किन्तु.....किन्तु.....वह नारी है.....वह उससे कुछ सुनना चाहती है.....हर रात विदा होने से पूर्व कुछ सुनना चाहती है किन्तु वह कहता तो है नहीं.....किसी दिन भी उसने कहा नहीं.... कमरे के छेद में चाभी डाल कर घुमाते हुए ललित सोच रहा था कितनी अच्छी है वह लड़की.....कितनी मेहनती, कितनी सीधी, कितनी भोली और कितनी भली.....प्यारी-प्यारी.....

"तुम जैसी प्यारी बिटिया को कहीं मारा जाता है ?" और उसका मन न जाने कैसा होने लगता.....बहुत बार उसका जी चाहा कि.....लेकिन एक नन्हीं सी, प्यारी सी, भोली सी.....लड़की उसकी स्मृति में जाग उठी.....

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

प्यारी सी .....प्यारी सी.....ललित न जाने कितनी देर बन्द द्वार के सामने खड़ा रहा अचानक उसे लगा कि वह पागल होता जा रहा है.....अचानक उसका जी चाहा कि वह समुद्र पार की दूरी क्षण भर में दूर कर पाता लेकिन फिर करता क्या.....लल्लू का पत्र एक मास पूर्व आया था.....उसने लिखा था कि पम्मी मैट्रिक मे फर्स्ट डिवीजन पास हो गई.....उस दिन दिनभर ललित कितना खुश था और उसने पम्मी को एक छोटा सा प्यारा सा ट्रिन्सिस्टर भेज दिया था प्रेजेन्ट.....लेकिन उसका उत्तर अभी नहीं आया था।। बधाई के पत्र का.....काश कि पम्मी यहाँ होती लेकिन क्यों होती.....उसे क्या करना है। पम्मी है कौन है पम्मी उसकी..... ....कोई भी तो नहीं.....एक परिचित की पुत्री मात्र, एक मित्र की बहिन मात्र..... और यह सभी.....ये जेनी.....ये.....ये.....नहीं, नहीं..... ....पम्मी इन सबसे भिन्न है.....वह नन्हीं बच्ची है लेकिन मुझ क्या.....मुझे क्या .....मामा का गत वर्ष देहान्त हो गया.....ललित अब स्वतन्त्र है..... धन भी है ही.....चित्र वह अब भी बनाता है लेकिन समय ही कहां मिलता है.....पम्मी.....क्या पम्मी भी पेन्टिंग सीखती होगी.....जरूर सीखती होगी.....वह तो गाती भी बड़ा मीठा है.....बड़ी ही भावुक लड़का है.....कितनी अच्छी हैं ये सभी.....उसे जर्मन नाम नहीं अच्छे लगते वह उनका अपना ही संस्करण कर लेती है.....इसके मित्रों मे स्त्रिया भी हैं और पुरुष भी सभी तो उस पसन्द करते है.....सभी तो उस प्यार करते हैं.....परसों ही तो उसने कहा था.....कितन प्यारे हो तुम ललित..... और इसने उत्तर दिया था और कितना स्वीट हो तुम स्वीटी.....और दोनों हंस पड़े थे.....और फिर बस बिदा.....और ललित जब भी कभी अकेला होता है उसके स्वप्नों मे उसके दिवा स्वप्नों में आ आती है पम्मी.....प्यारी सी लड़की पम्मी.....और वह चाहता है कि वह उड़ कर पहुंच जाता अपने देश.....अपनी धरती पर.....किन्तु उसे पढ़ना है, सीखना है कितने अच्छे है ये लोग.....कितने स्नेही.....कितने भले.....कितने फ्रैन्डली..... ललित का जी चाहा कि वह उठ कर लल्लू के पत्र को फिर से पढ़े किन्तु.....किन्तु.....और तीन साल बीत गये..... ....यह उन दिनों की बात है जब ललित उसी नगर में असिस्टेन्ट इन्जीनियर था.....और प्रमिला

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

गुप्त बी० ए० के द्वितीय वर्ष में थी·····संगीत, साहित्य, कला की पुजारिन·····लल्लू का विवाह हो चुका था और वह अपनी पत्नी सहित बम्बई का ही काम देखता था और वहीं रहता था·····गुप्ता और मिसिज गुप्ता प्रायः व्यस्त रहते थे और ललित और पम्मी प्रायः संध्या को टैनिस खेलते, घूमते फिरते थे और तभी सुना गया कि पम्मी की बात-चीत एक बड़े भारी सेठ के बड़े ही सुन्दर, बड़े ही सुशील ग्रेजुएट लड़के के साथ चल रही है····· ललित से भी गुप्त जी ने चर्चा की थी और ललित को न जाने कैसा-कैसा सा लगा·····हैं पम्मी चली जायगी·····कैसा होगा उसका रईस पति·····कैसा होगा उसका घर बार·····और अकारण ही ललित, उदास हो गया····· कितनी ही लड़कियां तो उसके आगे पीछे मँडराती हैं लेकिन कैसा होता है विवाह करना क्यों नहीं किया उसने विवाह·····लोग कहते हैं अब कर लो सत्ताईस वर्ष के तो हो गये अब क्या बुढ़ापे में शादी करोगे.... लेकित·····लेकिन····· लेकिन·····उदासी बढ़ती गई·····गहरी होती गई·····

"पम्मी तुम चली जाओगी ?"

"जाना ही पड़ेगा।"

"क्या ऐसा नहीं हो सकता कि·····"

"क्या बच्चों जैसी बातें कर रहे हैं आप ललित जी·····और उसका गला भर आया····· "

"पम्मी" और न जाने क्या था उस एक शब्द में, उस करुण स्वर में कि वर्षों पश्चात वाचाल पम्मी उस एक शब्द का उत्तर नहीं दे पाई····· उसकी आंखें छलछला आईं·····कुछ देर बाद उसने इतना ही कहा— "मुझमें साहस नहीं है ललित जी, मैं कुछ नहीं कर सकूंगी·····"

"मुझे नैतिक बल तो दोगी यदि मैं साहस करूँ तो·····"ललित एक बार केवल एक बार, पहली ही बार ऐसे स्वर में बोल रहा था।

"मुझसे कुछ भी नहीं बनेगा·····शायद कुछ भी नहीं·····और वह अठारह वर्ष की नव युवती भरे गले से न जाने क्या गुनगुनाती हुई भीतर चली गई·····और फिर दिन बीतते गये ····और फिर शायद वर्षों दोनों की भेंट तक नहीं हुई और शायद फिर वर्षों दोनों को एक दूसरे का समाचार भी नहीं मिला किन्तु विवाह के दूसरे दिन बिदा से पहले अचानक एकान्त

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पाकर पम्मी पहली ही बार ललित के कन्धे पर सिर रख कर रो पड़ी..... हिचकियों से.....ललित अपने को सम्हाल ही नहीं पा रहा था.....बड़ी मुश्किल से वह इतना ही कह पाया 'पम्मी ! ईश्वर से यही प्रार्थना करता रहूंगा कि तुम सुखी रहो किन्तु यदि कभी आवश्यकता पड़े तो याद रखना कि ललित तुम्हारा ही है और रहेगा.....और शेष शब्द आंसुओं में बिल्कुल डूब कर पिघल गये.....और फिर पम्मी बिदा हो गई.....सभी के लिये बिदा हो गई .....वह पराई हो गई.....वह चली गई अपने कामदेव सरीखे, कुबेर सरीखे पति के साथ.....

(५)

"मेम साहब लेने कूँ कब आयेंगा ?" ड्राईवर ने भद्र महिला से कार का द्वार खोलते हुये नम्रता से पूछा। दृढ़ निश्चय और पूर्ण गौरव से तन कर खड़ी उस महिम सी अधेड़ महिला ने दृढ़ स्वर में कहा—"तुम्हें आना नहीं होगा यह पत्र साहब को दे देना।" ड्राईवर चला गया.....महिला के हाथ की अँगूठी का बड़ा सा हीरा सूर्य की अन्तिम किरणें पड़ने से चमक उठा था.....उसकी आखों में विचित्र सी चमक थी.....उसने सीढ़ी पर चढ़ते हुये चपरासी से कहा—"साहब से मिलना है ?"

"साहब तो इस समय किसी से नहीं मिलते।"

"कहाँ हैं ?"

"अपने स्टूडियो में।"

"स्टूडियो किधर है दिखाओ।" स्वर में शासन का गौरव था और अधिकार का बल। चपरासी ने साहस करके कहा—"साहब की आज्ञा है कि किसी को इस समय स्टूडियो में न जाने दिया जाय।"

"जानती हूं.....चलो" चपरासी ने नारी के सशक्त स्वर की अवहेलना करने की शक्ति अपने भीतर नहीं पाई.....

"कौन है ? इस समय किसने आने दिया यहाँ ?" स्वर में थकान थी, नैराश्य था और थी घनी उदासी.....

"क्या आज भी पीठ पर पत्थर ही फेंक कर मारना होगा ?" वह चौक पड़ा और क्षणेक में दोनों आमने-सामने खड़े थे। चपरासी जा चुका था....

"तुम, पम्मी ?" वह चकित था.....

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बुलबुले

नन्हीं-नन्हीं बूंदे लगातार पड़ती जा रही थीं फिर भी विभा को जान पड़ता था कि उसका चेहरा, उसकी पीठ, उसका सारा शरीर जल रहा है। उसने नल को और भी अधिक खोल दिया शवर से बूंदें और भी तेजी से और भी मोटी मोटी गिरने लगीं। उसके चेहरे पर, पीठ पर, सारे शरीर पर·····उसने शरीर पर साबुन लगाया·····बुलबुले बनाना उसका प्रिय खेल था आज का नहीं तब का जबकि वह फ्रॉक पहना करती थी जब कि उसके कटे हुये बाल उसके कन्धों पर खेला करते थे, जबकि उसे स्कूल का काम न कर पाने पर डांट भी पड़ती थी·····बुलबुले बन रहे थे रंगीन····· हलके·····पतले और टूट-टूट जाते थे आज ही तो उसकी जिन्दगी का सबसे रगीन बुलबुला भी टूटा था और आज ही उसे फिर से बनाने से पूर्व विभा भूल जाना चाहती थी टूटे बुलबुले को उसकी मीठी रंगीनियों को उसके अस्तित्व को आज वह स्वतन्त्र है पूर्ण स्वतन्त्र है एकबारगी स्वतन्त्र है····· वह प्रसन्न थी बहुत अधिक प्रसन्न थी उसका चित्त प्रफुल्लित था बहुत ही अधिक प्रफुल्लित था·····उसने अपने वकील से कह दिया था कि वह उसे एक शानदार दावत देगी शीघ्र ही देगी और उसी में उसके नवीन पग सम्बन्धी निश्चय को भी घोषणा हो जायेगी·····नया बुलबुला बनेगा····· अवश्य बनेगा·····

रंगीन बुलबुला और भी रंगीन हो उठा और भी बड़ा हो उठा और भी अधिक पारदर्शक हो उठा·····एक नन्ही सी सुन्दर बालिका अपने सुनहले

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

लहराते हुए बालों में लगे साबुन को बार-बार हाथों में ले रही थी..... माँ ने कहा—बिट्टी ! क्यों देर करा रही है रानी मान जा ना..... बालिका दूर पर एक तितली देखकर और चँचल हो उठी। माँ के हाथों में साबुन लगा रहा और बिटिया खुले दरवाजे से गुसलखाने से बाहर हो गई उसके सुनहले बाल, लहराते बाल साबुन लगा देने से सिर पर चिपके हुए थे और..... और.....तभी उसकी आंखों में साबुन चला गया तितली कहाँ गई..... जलन होने लगी..... बालिका चीख उठी माँ ने आकर उसे पकड़ कर गुसलखाने में ले जाकर आँखों पर पानी के छींटे दिये तब कहीं जाकर बड़ी कठिनाई से आंखों की जलन मिटी..... लेकिन पूरी कहाँ मिटा.....

उसे लगा कि उसकी आँखें जल रही हैं..... नया बुलबुला तेजी से बना तेजी से मिटा वह खेल रही थी तभी बालिका की फ्राक के स्थान पर साड़ी आ गई..... विभू ! कितनी प्यारी है तू.....रानी कितनी सुन्दर है तू.....और..... और..... वह कितना तेजस्वी था उसे हँसी आ गई..... पुस्तकालय के पिछवाड़े का एकान्त दोपहर की चमकती धूप.....ऊँचे-ऊँचे पेड़ों का साया..... चारों तरफ लड़के-लड़कियों के आने-जाने की हलचल.... गौरय्यों का जोड़ा फुदकता हुआ, घास का फर्श और किशोर.....उसके मुँह में सिगरेट और युवती की नासिका में उसकी गन्ध.....दोनों की आंखों में चमक, होठों पर थिरकन.....

"कैसी प्यारी ठंड पड़ रही है ?"

"मैकबेथ का क्रिटीसीज़म पढ़ रही हूं आजकल..... ....."

"अरे फस्ट क्लास तो तुम्हारा श्योर ही है फिर इतनी परेशान क्यों होती हो ?"

"सच ? लेकिन मैं तो आई० ए० एस० में बैठना चाहती हूं क्या राय है तुम्हारी ?"

"कौन बैठने देगा ? एम० ए० तक तो कर नहीं सकोगी। तुम्हारे पापा तो लड़का भी ठीक कर चुके हैं।"

"क्यों ? क्या मैं अपनी इच्छा के अनुसार कुछ भी नहीं कर सकती ?"

"कर सकती हो सब कुछ कर सकती हो लेकिन....." मीठी सी मुस्कराहट.....हल्की सी हँसी.....ओठों पर तनिक सा व्यंग, तनिक सी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बेबसी, तनिक सा दर्द, तनिक सी चिढ़न, कुढ़न.....

बुलबुला टूट गया.....बन गया फिर टूट गया..... धार चलती रही बूंदें पड़ती रहीं.....आँखों में भी बूंदें आईं चली आयीं कसक हुई, जलन हुई, सागर उमड़े और फिर सब शान्त.....सब ठीक..... .....सब चुपचाप..... रँगीन बुलबुला टूटा..... स्मृति रही.....आई और गई.....गई..... फिर दूसरा रँगीन बुलबुला बन गया।

"दुलहिन तो भई चाँद का टुकड़ा है।"

"और लड़का ही कौन कम है?"

"लड़का तो हजारों में एक है बड़ी सुन्दर जोड़ी है....."

"और.....और वह सुन्दर सलोना सा मुखड़ा..... सलोनी-सलोनी बातें हँसमुख लेकिन खोया-खोया सा स्वभाव..... रँगीन.....रँगीन और भी रँगीन और भी हल्के पुलबे और भी बड़े-बड़े बुलबुले बनते गये..... बनते गये कितने रँगीन थे वे कितने सुन्दर थे वे लेकिन क्षणिक.....पारदर्शी लेकिन.....झूठे ही तो..... नश्वर ही तो.....वही तो..... .....वही तो.....

बुलबुला बना..... .....एक और नन्हीं सी बच्ची सुनहले बालों वाली, चंचल तितली सी सुन्दर..... .....आई..... प्यारी सी..... .....ममत्व का साकार स्वरूप सा..... .....लेकिन खेली कहाँ सिर्फ आई..... .....आई..... और गई बुलबुला टूट गया..... फूट गया.....दिल टूट टूट गया.....

और फिर.....फिर बना एक रँगीन सा बुलबुला, सुन्दर सा सलोना सा.....नन्हें मुन्ने फूल सा..... .....कोमल सा..... .....आया..... .....और बुलबुले रँगीन होते गये बढ़ते गये..... .....आनन्द की सीमा ही कहाँ थी।

"तुमको पड़ा है।"

"अरे नहीं देखिये आँखें बिल्कुल आप पर पड़ी हैं।"

"अम्मा तो कहती थीं कि बहुत सुन्दर है और सुन्दर है तो तुम्हे ही पड़ा है।"

"जाने दीजिये आप तो बनाते हैं।"

और दर्पण सामने कर दिया गया। सुन्दर था तो वह चेहरा.....कैसा भोला कैसा गुलाबी कैसा प्यारा.....

और फिर.....एक दिन आई वह फूल की कलियों सरीखी.....

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

तितली के परों जैसी चंचल.....बिलकुल बच्ची सी ही थी .....स्टैला..... स्टैनो.....स्टैला.....उनकी स्टैनो.....हलकी फुलकी रँगीन बुलबुले जैसी.....फुलझड़ी जैसी.....अछूते प्यार जैसी कुँवारी कलियों जैसी उनकी स्टैनो.....सिर्फ स्टैनो मिस हावर्ड.....मिस स्टैला हावर्ड .....कितनी पतली अंगुलियाँ थीं और कैसी कोमल लहर थी बालों में.....कितनी मीठी थी उसकी बातें.....जी तो भरता ही नहीं था..... और फिर वह सुन्दर सलोना हँसमुख लेकिन कुछ खोया-खोया मन कुछ हल्का सा जान पड़ा..... बुलबुला टूट रहा था.....लेकिन बुलबुले को पकड़ कर अमर तो किया नहीं जा सकता.....और क्यों.....बुलबुले बनते हैं और टूटते हैं, रँगीनियां बिखरती हैं और मिटती हैं.....बुलबुला टूट गया.....साबुन हाथों में लगा रहा.....बुलबुला बनाने, बनाये रखने की कोशिश में कुछ साबुन आँखों में भी तो चला गया.....आँखों में जलन हुई.....जलन बढ़ती गई.....नन्हा मुन्ना सा पानी थोड़ा बहुत पड़ा भी लेकिन कसक कम न हुई कसक बढ़ती गई.....जलन बढ़ती गई.....बढ़ती गई और इतनी बढ़ी कि असह्य हो उठी.....बुलबुले बनते भी हैं और टूटते भी.....तब फिर टूट ही जाने दो.....और किया भी क्या जा सकता है ?

"मैं उसके बिना जी नहीं सकता विभा ?"

"और मेरे बिना जी सकते हैं शायद ?"

"शायद"

"मुन्ने के बिना ?"

"शायद ।"

"तब फिर टूटने ही दो.....और बुलबुला टूट गया..... रंगीनियां खो गईं अस्तित्व मिट गया.....वर्षों की कहानी समाप्त हो गई.....

महीनों बाद वकील साहब ने कहा..... "बधाई ! आप केस जीत गईं ।" और विभा को लगा कि वह आज फिर से एक नया बुलबुला बनायेगी भले ही वह भी टूटने के लिए ही हो.....वह क्यों रोये उसके लिए जो टूट चुका है और उसके लिए भी जो बन नहीं पाया है.....वह बनायेगी..... फिर बनायेगी.....खेल ही तो है फिर इसमें रोना कैसा.....और आज वह महीनों, वर्षों बाद जी भर कर आनन्द लेगी.....स्नान करेगी शृङ्गार

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

करेगी और फिर उसके ड्राइंग रूम में रंगीनियां खिलेंगी फूल हसेंगे जिन्दगी मीठी-मीठी होकर बहेगी भले ही वह क्षणिक हो लेकिन वह क्षण तो उसके अपने होगें ही.....

विभा हंसती हंसती शेखर की बाहों से खेल रही थी खेलती रही बड़ी देर तक खेलती रही और फिर निकल कर ड्रेसिंग रूम में आई.....कद्दे आदम आइने में उसका सुडौल शरीर चमक उठा..... कितना रूप है..... कितना सौन्दर्य है.....उसने सोचा मैं नई.....एक बारगी नई जिन्दगी बनाऊंगी नया बुलबुला और भी ज्यादा रंगीन होगा.....खेल ही तो है और वह खिल उठी..... उसने बड़े परिश्रम से सबसे सुन्दर साड़ी निकाली .....बड़े मनसे वर्षों वर्षों बाद शृङ्गार किया..... दर्पण हिल रहा था..... कैसा अपूर्व सौन्दर्य है..... सुनहले बाल पीठ पर लहरा गये..... सुन्दर पलकों के नीचे दोनों आँखें चमक उठीं..... उसका जी चाहा कि खुद अपने को चूम ले..... वह खुद अपने से झेंप गई उसने देखा कि उसके दोनों गाल लाल हो रहे थे..... वकील साहब ने एक दिन कहा था ऐसा रूप और गुण का समन्वय और कहीं नहीं देखा और जीवन में शायद फिर कभी देख पाऊँगा भी नहीं, प्रसाद साहब बद्र नही कर पाये.....उसके होंठ खिल रहे थे.....उसका मन नाच रहा था.....उसका विश्व गा रहा था.....दुनियाँ रंगीन हो उठी थी..... वह नया बुलबुला बनायेगी नई दुनियाँ बसायेगी .....नया संसार उसका संसार होगा..... वह साबुन के बुलबुलों से खेलना पसन्द करती है वह उसका सदा से ही प्रिय खेल रहा है वह वही खेलेगी सदा खेलेगी..... खेलती ही रहेगी। "ममी ! पापा कब आएगे ? बताइये।" दर्पण में आया के आगे-आगे चलते फूल से नन्हें की छबि थी.....प्यारा सा नन्हा सा रंगीन सा बुलबुला। "क्यो ? तुम्हें पापा क्यों याद आ रहे हैं आज ? और तो कभी नहीं पूछते थे ? क्यों बेबी ?"

"हम नहीं जानते हमे बताओ हमारे पापा कब घर आयेगे ? बताओ ना ?" वह जिद कर रहा था। उसकी आँखे बुझ भी रहीं थीं।

विभा के होठों तक आया "कभी नहीं"

लेकिन इससे पहले कि वह कुछ कह सके वह बोल उठी—

"ममी ! हम तो पापा से खिलौना लेगे। सब कहते हैं वे नही.....आयेंगे। क्यों ममी ! मेरे पापा ! ऊं.....ऊं.....

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

उन्हें जल्दी बुलाओ मां रात हो रही है। वह पड़ोस का लड़का कहता है कि मेरे पापा अब नहीं आयेंगे ममी ने उन्हें निकाल दिया।" विभा का अनबना.....काल्पनिक .....रंगीन बुलबुला बनने से पहले ही टूट रहा था .....विभा.....विभा हिल उठी.....खेल नहीं चलेगा .....कैसे चलेगा जान पड़ा कि यह नन्हा बुलबुला उसके सभी बुलबुलों को तोड़ फोड़ कर फेंक देगा.....अदालत का फैसला कुछ भी हो .....नन्हें का फैसला कैसे टूट सकेगा.....न चाहते हुए भी अनजाने ही विभा के मुंह से निकल पड़ा "चल हम अभी कार से चलकर पापा को ले आयें.....वह अभी क्लब में ही होंगे.....आयेंगे क्यों नहीं बेटा ?" आया मुंह फेर कर मुस्कराने लगी.....मेम साहब ने उससे आज ही कहा था "आया हम जीत गये तलाक मिल गया अब आज हम दावत देंगे और..... ...और....." आया समझ गई थी.....लेकिन आया इस समय मुस्करा रही थी..... ...एक रंगीन बुलबुला बनने से पहले ही टूट रहा था लेकिन एक एक बन रहा था रंगीन.....बड़ा .....सुन्दर पारदर्शी .....विभा खेल रही थी। मां विभा .....नन्हीं सी विभा वही जो बचपन से साबुन के बुलबुलों से खेला करती थी..... ...। उसके बुलबुले.....रंगीन सुन्दर बुलबुले टूट चुके थे.....लेकिन.....लेकिन..... उसका नन्हा सा फूल सा रंगीन बुलबुला..... ...उसकी आंखों की जलन मिट गई थी .....उसे जान पड़ा कि उसके चेहरे पर गर्दन पर पीठ पर सभी कहीं ठंडे पानी के छींटे पड़ रहे हैं बूंदे तेजी से उसके सारे शरीर पर सभी अंगों पर पड़ रही हैं उसके सभी रंगीन बुलबुले बन रहे हैं बनते जा रहे हैं .....बढ़ते जा रहे हैं वे पारदर्शी सुन्दर बुलबुले। नन्हा कुछ कह रहा था .....साड़ियों के ढेर के बीच शृङ्गार मेज के दर्पण के सामने बैठी विभा का नन्हा सा प्यारा सा बुलबुला उसकी टांगों से चिमटा खड़ा था.....उसने दर्पण में देखा उसे जान पड़ा कि सचमुच वैसा रूप कहीं नहीं है.....वैसा दृश्य कहीं नहीं है..... ...रंगीन बुलबुले बड़े हो रहे थे।

"आया ड्राईवर से कहो कि गाड़ी लाये। चलो हम लोग साहब को ले आयें....."

महीनों बाद मालिक घर आयेंगे आया मुस्करा रही थी.....बुलबुले रंगीन हो उठे थे.....रंगीन बुलबुले सुन्दर बुलबुले प्यारे-प्यारे बुलबुले.....

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कफेदस्त की हैं ये मजबूरियाँ

तब:—

सुरमई हवा के आँचल से फर-फर कर आती हुई बूंदें उसके गुलाबी चेहरे पर पड़ रही थीं·····उस चेहरे पर जो आत्मविश्वास से दमक रहा था·····जिस पर कुशाग्रबुद्धि और मानसिक बल की हलकी-हलकी सी चमक थी·····उसकी आँखों में·····हाँ दोनों खुली आँखों में एक अद्भुत सी चमक थी·····और वह कह रही थी·····कह क्या रही थी उसके मुख से शब्द लहरी मानों झर रही थी उन्हीं नन्हीं-नन्हीं सुरमई·····काले काले बादलों तले···· ···भीनी-भीनी हलकी-हलकी हवा के आँचलों से फर-फर कर आती हुई बूंदों की तरह·····"और फिर एक नयी जिन्दगी होगी·····नया इनसान होगा·····"

"बीबो ! तुम कुछ भी कहो इन्सान तो यही होगा·····यही धरती होगी यही आकाश होगा·····"

"नहीं·····नहीं·····नहीं भाभी·····नहीं सौबार नहीं·····तपस्वी का तप अकारण नहीं जाता कभी तो वह फलीभूत होगा ही और भीतर बरामदे में मां ऐनक लगाये मोटी पोथी पर झुकी रामायण पढ़ रही थीं·····

"अस जन्मा है को जग माहीं,
प्रभुता पाई जाहि मद नाहीं।"

"भाभी तुम नहीं समझोगी परतंत्रता से बढ़ कर पाप और कोई नहीं है·····"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"यह तो ठीक है किन्तु....."

"इसमें किन्तु परन्तु नहीं हुआ करते" और उस बालिका ने सदा-सदा के लिये खादी और पवित्र सादा जीवन को अपना लिया इस आशा में कि एक दिन इस धरती पर राम-राज्य होगा, स्वर्ग होगा, स्वराज्य होगा.....घर वालों के ताने, पड़ोसियों के व्यंग, पाठशाला में डाँट धमकियाँ, सी०आई०डी० का पीछा लगा रहना सभी कुछ तो सहा.....यहाँ तक कि आजीवन ब्रह्मचर्य कृत पालन करने का निश्चय भी किया.....

अबः—

"मुझ से अन्याय नहीं होगा।"

"यह अन्याय नहीं है। आखिर हमारा कुछ लिहाज तो आप को करना ही होगा।"

"मैं आपका आदर करती हूं किन्तु आप मुझसे ऐसी आशा कैसे करते हैं कि मैं पराये मुंह का कौर अकारण छीन कर दे दूं और सो भी तब, जब कि आपको आवश्यकता भी नहीं है।"

"देखिये मैं आपको बहुत कुछ बना सकता हूं....."

"किन्तु मैं अन्याय नहीं कर पाऊँगी।"

"मैं आपकी हानि भी कर सकता हूं।"

"आप.....आप.....स्वराज्य की नींव के पत्थर आप..... इसलिये कि मैं अन्याय नहीं कर पाऊँगी.....आप के निजी स्वार्थ की पूर्ति नहीं कर पाऊँगी.....आप मुझे दण्ड देंगे क्योंकि सत्ता आपके हाथ में है.....क्या यही राम राज्य है वह राम राज्य जिसकी कल्पना में मैंने अपना जीवन होम कर दिया....." उसके कानों में गूंज उठी पंक्ति "अस जन्मा है को जग माहीं, प्रभुता पाई जाहि मद नाहीं।"

"देखिये प्रश्न आपका नहीं है संस्था का भी है और आपको उसका हित देखना है जोकि मैं कर सकता हूं और.....और.....अहित भी....." और सुनने के लिये उसके पास कान ही नहीं थे.....

संस्था का हित.....उस संस्था का जिसे उसने सन्तान की भाँति पाला है "आखिर सभी तो यही करते हैं आपको ही क्यों आपत्ति है? भई जो हमारे काम आयेगा हम तो उसी के काम आयेंगे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

वह मन ही मन चीख उठी "किन्तु उस निरपराध के साथ अन्याय जो होगा·····किन्तु संस्था·····हित····· अहित·····"

"आप देख लीजिये।" और वह रात भर तड़फती रही इसी विचार में कि उसे क्या करना होगा किन्तु सत्ता····अधिकार·····हित·····संस्था का हित·····उसकी जीविका का प्रश्न····उसे पचास वर्ष में पहली बार जान पड़ा कि वह अकेली है बहुत ही अधिक अकेली है····नितान्त एकाकी ·····नितान्त असहाय·····उसकी अन्तरात्मा तड़प उठी।

"कफ़ेदस्त की हैं ये मजबूरियाँ" और भी सुनियेगा ? लेकिन क्या करियेगा सुन कर मजबूरियों की दास्तां····तड़पते मनकी, मन घुटने की कहानियां वे अफसाने जो भीतर ही भीतर गलते रहते हैं जिनके घुएं की विषैली गन्ध चारों ओर फैलती तो है लेकिन····लेकिन····किन्तु·····परन्तु·····

मेरे ग़म की है कहानी, इसे दास्तां न समझो।
अभी सुनके रो पड़ोगे, मुझे किस्सेख्वाह न समझो॥

(१)

कि:—

"देखिये आज तो मैं मिठाई खाये बिना टलने को नहीं"

"क्यों-क्यों ऐसी क्या बात है ?"

"लीजिये, हमारे दोस्त और हमी से उड़ते हैं जैसे कुछ जानते ही नहीं·····"

"सच नहीं जानता भाई ! पहेलियां क्यों बुझाते हो बता दो न ?"

"मैं यही नहीं मान सकता। भला इस जमाने में बिना कोशिश किये कुछ काम होता है ?"

"अच्छा अब बता भी दे यार।"

"तेरा नाम गज़टेड पोस्ट के लिये नम्बर वन रेकमेन्ड होकर आ गया है।"

"सच" और अचानक वह पैंतालिस वर्षीय व्यक्ति बच्चों की भांति मित्र से लिपट गया·····

"सच, क्या तुझे मालूम नहीं था"

"बड़े बाबू कह तो रहे थे किन्तु इन लोगों का अरे भई बड़े आदमी हैं यकीने वादा नहीं·····"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"अच्छा, अच्छा अब शायरी तो रहने दे। भाभी से कहता हूं कि चाय भेजें·····भला बड़े बाबू नाम क्यों न भेजते तूने भी तो दो साल दिन-रात एक करके उनके गधे लड़के को मैट्रिकुलेट बना ही दिया है।" उत्साह से उसने कहा।

"अरे तो कोई उन पर एहसान किया है। बॉस जो है ये सब न करे तो कोई वहाँ टिक सकता है। जानते तो हो ही·····और क्या साहब यूंही मान गया है मेरी पत्नी ने छः महीने लगातार उनके घर की साग-सब्जी का भार अनजाने अनकहे ही ढोया है भाई·····"

"पर चलो काम तो हो ही गया।" उसके स्वर में तनिक सा व्यंग भी था।

"अरे अभी कहाँ भई जब पूरा हो जाये।"

"बस अब क्या है? सेक्रेटरी तो दस्तखत मार ही देंगे फिर मिनिस्टर भी दो अक्षर गोद देंगे और आर्डर तुम्हारे हाथ में। रहा सेक्रेटरी सो तो मेरी मुट्ठी में है।"

"अरे यह गुर तो तू खूब जानता है।"

"पर यार तबीयत झक हो जाती है। दो महीने हो गये बीवी मायके गई थी उसे लाने को एक दिन की छुट्टी नहीं मिल पाती।"

"काम काज भी तो बहुत है।"

"काम काज तो खाक है ही हाजिरी जरूर पूरी देनी पड़ती है·····बड़े साहब, छोटे साहब, मेम साहब·····मिस साहब और फिर उनकी सखी-सहेलियाँ·····आज किसी को फौरन स्टाम्प चाहिये तो कल किसी को कुछ टाइप कराना है तो परसों किसी के लिये माँग जाँच कर सनेमा के पास जुटाने हैं·····कहाँ तक गिनाऊं·····"

स्मः—

"अरे एक पियाली काफी में क्या होता है?"

"नहीं, अभी तो खाना खाना है।"

"खाना यहीं खा लो ना।"

"खा तो लेता लेकिन आज कहीं दावत है और·····"

"दावत कब नहीं होती तुम्हारी·····"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"अच्छा खैर एक काम है....."

"कहो तुम्हारी बात मैंने क्या कभी टाली है ?"

"यार मेरी साली का लड़का....."

"साली.....भई.....हो मूड में.....हो तो....."

"अब क्या कहूं ? उसे कहीं खपाना है....."

"कोई जगह बताओ ?"

".....ब्रांच में एक गजटेड पोस्ट हुई है.....उसी पर लगवा दो ना ... तुम जानते तो हो प्रमोद को.....वह लम्बा सा..... अरे पिछले साल उसी के घर तो तुम कॉकटेल में इन्वाइटेड थे....."

"अच्छा देखो देखूंगा....."

"अरे यह चरका किसी और को पढ़ाना। जरा पी० ए० को तो बुलाओ।" आज्ञा हुई और फिर पी० ए० साहब अपनी थकी हारी आँखों को लिये दिये फाइल तो लाये लेकिन.....

"उस पर तो आप के दस्तखत हो चुके हैं मैं तो उसे डिपार्टमेन्ट भी भेज चुका था.....वहीं से मँगा कर लाया हूं....."

"दस्तखत काटे और फिर बनाये भी जा सकते हैं।"

"यह तो बात ही क्या है आर्डर दे दिया भी होता तो क्या वापिस नहीं लिया जा सकता।"

"पर सरकार....." पी० ए० के मन के किसी कोने में तड़फती हुई न्याय की, नियम की और उससे भी बढ़ कर एहसानात की आवाज गूँज उठी.....

"नियमों के विधायक हम हैं कुछ उनके गुलाम नहीं.....क्यों ठाकुर साहब....."

"और क्या ?"

"लेकिन सतीशचन्द्र फर्स्ट क्लास हैं क्वालीफिकेशन और काम देख कर ही उन्हें नीचे से ही सबने फर्स्ट नम्बर पर रिकमेन्ड करके भेजा है।"

"लेकिन....." न जाने क्यों मिनिस्टर की जुबान रुक सी गई.....

"अरे इससे क्या ! प्रमोद बहुत स्मार्ट है।"

"असल बात तो साहब स्मार्टनेस की है। यूं रट रटा कर फर्स्ट क्लास

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ले भी लिया और स्मार्ट न हुए तो क्या फायदा और आपकी इच्छा पर यह तो निर्भर है।..... ....."

मिनिस्टर ने एक बार कुछ थकी हुई सी नजरों से पी० ए० को देखा और फिर निजी स्वार्थ के तराजू पर सहकर्मी की प्रार्थना के वजन को तौला और फिर चाटूकार को जन प्रतिनिधि की दृष्टि से देख कर मन को सन्तोष दिया.....

पी० ए० ने मुसाहिब की ओर जलती सी दृष्टि से देखा जोकि सतीशचन्द्र का क्लासफैलो था। स्कूल से यूनीवर्सिटी तक और सदा उसी से पढ़ कर थर्ड क्लास लुढ़क पुढ़क कर किसी तरह पास कर लेता था लेकिन आज एक अत्यन्त सफल व्यापारी है। और यही नहीं एम० एल० ए० भी है, नेता भी है, कलाकार भी है, उद्घाटनकर्ता भी है और है चाटुकार भी, मुसाहिब भी ....."सहकारी ने तनिक अधैर्य से कहा—"अरे यार अब मारो दस्तखत और खतम करो किस्सा..... प्रमोद कह भी रहा था कि....."

पी० ए० का जी चाहा कि उन साहब का मुंह नोच लें जो कि टुकर-टुकर दोनों को मुंह ताकते हुए कुछ कहने के लिये चोंच सम्हाल ही रहे थे कि सुप्रीम बॉस ने पिछला लिखा दस्तखती नाम काट कर लिखा "प्रमोद कुमार दास" और हस्ताक्षर कर दिये।

"देखो आर्डर कल तक पहुंच जांये।"

एम० एल० ए० साहब ने अकारण खुशामद भरे लहजे में इस युग के देवता के चरणों में शीश नवाते हुए कहा उनके वाहन पी० ए० से.....

"जो हुक्म सरकार" उसने कहा ऊपर से लेकिन मन ही मन कहा जरूर होगा। "कफेदस्त की हैं ये मजबूरियाँ"

तः—

और मैट्रिक से एम० ए० तक फर्स्ट क्लास, काम में चतुर, बॉस की सेवा में दक्ष, आफिसरों को प्रसन्न करने में चतुर सतीशचन्द्र अपने मित्र को मिठाई नहीं खिला सके.....कभी भी नहीं खिला सके किन्तु थर्ड क्लास प्रमोद कुमार के घर तीसरी शाम को काकटेल पार्टी हुई लेकिन यह तो पार्टियों के सिलसिले की अभी शुरुआत ही थी ना।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(२)

"तो मैं बैठी हूं।"

"नहीं, नहीं आप जाइये। यहाँ भीड़ करने से क्या फायदा ?"

'आप काम समाप्त कर लें। मैं तब तक गीता पढ़ती हूं।"

"देखिये यहाँ केवल दो ही कुर्सियां हैं और मिलने वालों की तो बाहर भीड़ सी लगी हुई है।"

"ठीक है, तब मैं भीतर से एक और कुर्सी उठा लाती हूं।" और वह उठ कर भीतर की ओर मुड़ गई।

"ठहरिये, उधर न जाइये। अब आप कल आइयेगा।"

"मैं बाहर बेंच पर बैठ जाती हूं।"

"रात के दस बज चुके हैं। आप के परिवार के लोग....."

"उनकी चिन्ता न कीजिये। वे सब आपकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे।"

"किन्तु मेरी तो आज तबीयत ठीक नहीं है। विश्वास मानिये मैं कुछ भी नहीं खा सकूंगा ?"

"आप चले ही चलिये। जो कहियेगा आपके लिये मैं स्वयं बना दूँगी...."

"मेरी भोजन की तनिक भी इच्छा नहीं है देवी जी।"

"किन्तु मेरी आपको सामने बिठा कर भोजन कराने की प्रबल इच्छा है आप जो कहेंगे वही बना दूँगी।"

"किन्तु मैं तो अभी दो ढाई घण्टे तक खाली नहीं होऊँगा।"

"तो मैं बाहर बेंच पर बैठ कर आप की प्रतीक्षा करूँगी....."

"तो आप जाती क्यों नहीं....." तनिक रुक कर "कह तो दिया कि कोशिश करूँगा।"

"कोशिश करने की बात नहीं मैं तो अब तभी जाऊँगी जब कि आप टिकट दिलाने का वायदा करें। घर से यही प्रतिज्ञा करके चली हूं....."

"कई बार तो कह चुका हूं कि आपने देश-सेवा के लिये क्या किया है ? मैं साथियों से क्या कहूंगा कि आप को टिकट क्यों दें ?" स्वर में झुंझलाहट थी।

"यह नहीं कह सकते कि मेरी सखी है, परिचिता है या.....या केवल देश-सेविका है....." स्वर में विचित्र सी मुस्कराहट थी.....

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"आप मेरी जान तो छोड़िये....."

"देखिये मैं....."

"आप यहाँ से चली जायें....."

"मैं आप का कुछ बिगाड़ती तो हूं नहीं....."

"अच्छा बीबी कहा टिकट मिलेगा जान तो छोड़ो..... ..."

"देखिये मैं सन् ३० से देश की सेवा में तन मन धन अर्पित किये हूं...."

"हूं, शायद इसीलिये आपने सन् ३७ में गवर्नर को पार्टी दी थी....."

"वह तो मेरे पति का शौक था यूं मैं तो....."

"सिवाय शुद्ध ज्योर्जेट और फ्रेन्च शैफ्रोन के कुछ पहनती ही नहीं थी यह दूसरी बात है कि मेरे होठों पर लिपस्टिक....." स्वर तिक्त था.....

"हूं आप तो बना रहे हैं। मैं ने तो सदा देश-सेवा पर ही प्राण....."

"अच्छा, अच्छा अब शेष भाषण फिर किसी दिन सुनूंगा....."

"जी मैं तो काम पूरा किये बिना..... ..." कुछ ठहर कर "सन् ४२ के आन्दोलन में....."

"जी हां, आपही फांसी पर चढ़ी थीं शायद....." व्यंग तिक्त था..... कड़वा सा.....कठोर सा.....

"नहीं, मैंने एक क्रान्तिकारी को अपने घर में शरण दी थी और मैं स्वंय"

"वलिये आज से आपने खादी पहनना तो शुरू किया....."

"जी नहीं मैं तो सन् ३२ से शुद्ध खादी पहनती हूं यूं मैंने....."

"अच्छा कल प्रातः मिलियेगा....."

"आज भोजन तो आप को मेरे घर करना ही होगा मैंने गोभी मुसल्लम बनवाई है.....और कचनार के कोफ्ते और गूलर के कबाब.....और ....." और सुना कि उन्हें टिकट मिल गया.....मिला और फिर मिला वह देश सेविका हैं, कर्मठ हैं.....देश को उन पर नाज़ है वह हमारी प्रदर्शिका हैं.....

(३)

"और फिर दो सौ वोट हमारे हो गये।"

"वह कैसे ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"उन्हें बम्बा नहीं लगवाना था क्या ?"

"तो आपने बम्बा लगवा दिया ?"

"यूं थोड़े ही ? पहले एक दिन गये उस मुहल्ले के मुखिया से कहा-सुना है भई तुम·····को वोट दे दिला रहे हो ·····उसने कहा·····"सरकार का करी ओ हमारे द्वारे बम्बा लगवा रहे हैं ना·····मुदा यूं कष्ट कब तक सही बम्बे के बगैर बहुत कष्ट होत हैं·····" "तो फिर देखे वह तुम्हें लगवा दें तो हम चार दिन बाद आयेंगे तुम उनकी चार दिन इन्तजार कर लो फिर काम न हो तो भाई हमें याद कर लेना।"

"फिर क्या तुमने बम्बा लगवाना रुकवा दिया।"

"यही तो राजनीति है। और फिर उनसे पक्का वचन लेकर बम्बा लगवा दिया।"

"खैर दो सौ वोट तो मिल गये। अब पानी कैसे दे पाओगे गर्मियाँ आ रही हैं।"

"अरे ऐसे तो सैकड़ों बम्बे लगे हैं कौन सब को चालू रखेगा·····खेल खतम पैसा हजम और देख लो दस दिन फिर आधे बन्द।"

"और जनता को कौन मुंह दिखाओगे मेरे भाई ?"

"अभी हमें करना भी क्या है ?"

"और पांच साल बाद ?"

"पब्लिक मैमोरी इज़वेरी शार्ट·····कौन तब तक याद रखेगा·····"

(४)

"भई उसे ठीक करना है वह बहुत बदमाशी कर रहा है।"

"आप चिन्ता न करें·····शाम तक ही दरोगा जी से कह कर वह ठीक कराऊंगा कि शाम की मीटिंग में वह दौड़ा-दौड़ा फिरेगा आपके लिए।"

"क्या जादू फेरोगे भाई ?"

"बस यह न पूछिये।"

"भई तभी तो तुम्हें यहां लाये हैं। देखो इसके पास चार सौ वोट हैं। उसे किसी तरह ठीक जरूर कर लो। यह बहुत जरूरी है·····।"

"अरे साहब आप बेफ्रिक रहिये·····यह सब तो हमारे बायें हाथ का खेल है।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

(५)

गन्दी बोरी का छोटा सा ओछा सा टुकड़ा ओढ़े वह वहीं पड़ा रहता था। पिछले तीन दिन से यही देखा जा रहा था.....

कार निकलती थी और वह हाथ.....कमजोर.....खुरदरे..... नीली नसों से भरे बदरंग हाथ जोड़ देता था दूर ही से.....

उस दिन मुझसे न रहा गया.....पूछ ही तो बैठी—"कौन हो तुम ?"

"जात का चमार हूं आपका गुलाम सरकार....."

"यहां क्यों पड़े रहते हो ?"

बूढ़ी आँखों में कीचड़ को बेधकर मोटे-मोटे कई आंसू तैर आये।

"क्या बात है भाई" स्वर में सहानुभूति से अधिक उत्सुकता का पुट था.....

"सरकार आपका एक गुलाम बे कसूर ही फंस गया। गांव में खून हो गया। दरोगा पचास मांगता था सो मैं कहां पाता तो उस गबरू जवान को .....मेरे बड़े बेटे को फांस लिया.....सरकार बिलकुल झूठी गवाही थी .....कचहरी दरबार कहाँ से करता गरीब आदमी हूं। दौड़ा तो बहुत पर मेरे बेटे को फांसी की सजा मिल गई। सो बेचारे एक हमारे हलके के एम० एल० ए० साहब हैं सो हमें हियां ले आये कि मिनिस्टर साहब से कह कर छुड़वा देंगे।"

"तो उन्होंने कुछ किया ?"

"सरकार इस कोठी में रोज आते जाते तो हैं।'

"तो तुम यहाँ क्यों पड़े हो उन्हीं के पास क्यों नहीं रहते ?"

"सरकार घर की तनिक सी जमीन रही उसे बेंच कर १५० रु० लाया पर सो किराये भाड़े में ३० रु० तो चले गये थे। ३० रु० रोज एम० एल० ले साहब के ठहराने के तीन रोज के हो गये अब अपने ठहरने को इतना कहाँ से लाऊं फिर वे ठहरे बड़े आदमी..... अपना क्या सरकार कहीं भी पड़ रहे....."

जी चाहा कि कह दूं "कि वे कभी कुछ नहीं करा पायेंगे" किन्तु आशा भरी बूढी आँखों की ओर देखकर कहने की हिम्मत नहीं हुई किन्तु उनके साहस की प्रशंसा मन ही मन अवश्य की जो कि इन आँखों की ओर देखकर

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

भी मजे से वृद्ध के अन्तिम आधार को बेंच कर पाये हुए धन को अधिकांश सहजभाव से ले सके·····बिना कुछ किये धरे·····जान बूझ कर लेकिन यह क्या है·····चोरी·····डकैती अथवा·····अथवा·····

(६)

"उसका कसूर क्या है ?"

"अरे साहब वह एक नम्बर बदमाश है। उस पर तो कई दफाएं लगी हैं।"

"कौन कौन सी ?" त्योरियां चढ़ गईं·····

"वह ऐसा आदमी तो नहीं है। हमारे ही इलाके का तो है·····वह बेचारा तो बड़ा सीधा है। मेरे क्षेत्र में तो वह बड़ा काम करता है ?"

"हां, लगता तो सीधा है। न जाने कैसे पहले भी एक बार जेल·····"

"अरे वह किसी ने यूं ही फांस फूंस लिया होगा। पिछले सरकारी वकील भी यूँ ही बुद्धू किस्म के थे।"

"अरे साहब वह तो यूं ही बे गुनाहों को फाँस लेते थे। यह बेचारा तो बड़ा सीधा है। देखिये मैं जान लड़ा दूंगा और फिर मैं ही जाने नहीं दूँगा तो हो ही क्या सकता है।"

"हाँ, बस जरा देखे रहना। वह फँसने न पाये।"

"आप जो चाहेंगे वही होगा साहब·····यूं वह आदमी तो निहायत उम्दा है।"

"हाँ, यही तो मैं भी कहता हूं। वह आदमी बड़ा काम का है। उसका आम का बगीचा भी है। बस अब फसल आने दो कभी वहाँ चलेंगे।"

"जब आप हुक्म करें। यूं आपकी इच्छा के विरुद्ध कुछ नहीं होगा।"

"भई, तुम आदमी बहुत होशियार हो। इसीलिये तो तुम्हें रखा था।"

"आपकी कृपा है।"

"देखो भई इन्हें पान तो लाकर दो बढ़िया सा अन्दर से·····हाँ·····"

और वह उसी दिन जमानत पर छूट गया और बाद में अदालत से·····

गाँव भर त्राहि त्राहि कर रहा था उस दिन जब वह छूट कर घर पहुंचा था किन्तु वह कह रहे थे अपने पी० ए० से "देखो, इन वकील साहब को स्पेशल फीस पर उस तराई वाले केस में भी इन्गेज करवा दो।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ओटन लगे कपास

मुस्कराती आंखों से लिपस्टिक की हल्की सी परत चढ़े हुए होठों को जब सुनीला ने आखिरी बार दर्पण में देखा तो वह स्वंय ही अपने आप पर मोहित हो गई। उसकी कोमल अंगुलियां मचल उठीं कि एक बार उसके कोमल पतले होठों को सिर्फ एक बार फिरे से छू लें। लेकिन उसके कोमल होठों को छू लेने वाली अंगुलियों का तो उसे अभाव है नहीं·····उसने एक नजर अपनी डार्क पिंक प्रिन्टेड फ्रैन्च शैफ्रोन की साड़ी पर डाली दर्पण में और वह फूल उठी। ऐसी साड़ी यहां है ही किसके पास·····पिछले साल ही तो उसे उसके एक फ्रेन्ड ने फ्रान्स से ही लाकर दी थी। जब भी कभी वह उस साड़ी को पहनती थी तो उसकी आंखे गर्व से और उसकी सभी परिचिता देखने वाली महिलाओं की आंखें इर्षा से जल उठती थीं·····लेकिन उसे परवाह ही किसकी थी। वह जरनलिस्ट थी बाई प्रोफेशन लेकिन खुश दिल थी बाई बर्थ·····

उसके पास क्या नहीं था·····रूप यौवन धन और·····और मित्रों का एक बड़ा समुदाय·····लोग कहते हैं उसके पिता कहीं दूर देश में डाक्टर थे और उसको मां उसके पिता की विवाहिता पत्नी नहीं थीं। थीं, एक रखैल मात्र ही·····दबी जुबान से लोग तो यहां तक कह देते हैं वह तो कोई नीच जाति की अत्यन्त साधारण सी स्त्री थी किन्तु उसके पिता को न जाने कैसे उसने वश में कर ही लिया था। क्लब में उसकी धाक थी, घर में उसकी धाक थी और हर महफिल में उसकी धाक थी। जहां भी वह पहुंच जाये

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

.....वह सन्तुष्ट थी.....बहुत अधिक सन्तुष्ट थी अपने जीवन से..... उसके मित्रों की विस्तृत टोली बहुत ही अच्छी थी.....उसके शत्रुओं की छुट पुट जमायत जिनमें अधिकांश तरसती .....बिलखती.....भीतर ही भीतर रोती और ऊपर से हंसती पत्नियां थीं बहुत ही भली थी..... उसने एक बार फिर दर्पण पर दृष्टि डाली.....उसे जान पड़ा कि लिपस्टिक का रंग कुछ फीका है.....किनारे कुछ कम नुकीले हैं और .....और.....और मोड़ कुछ कम उभर पाये हैं।

एक बार फिर वह जम कर दर्पण के सामने बैठ गई.....घड़ी में अभी साढ़े चार बजे थे.....इन्टर-व्यू का समय ५ बजे था.....वह अभी और दस मिनट शृङ्गार मेज के सामने बिता सकती थी.....उसने लिपस्टिक फिर से अपने दाहिने हाथ की सुन्दर अंगुलियों के बीच में ले ली और कला उसकी अगुंलियों में मलय समीर की भांति थिरकने लगी.....होठों के कोने संवर गये थे.....ऊपर के होंठ के ऊपरी किनारे के ठीक बीच का मोड़ धनुषाकार हो गया था और निचले होंठ की गोलाई भर गई थी.....उसकी आंखें हंस उठीं.....भौहें हंस रही थीं.....होंठ खिलखिला रहे थे.....गाल मुस्करा रहे थे.....उसका रोम-रोम खिल उठा था.....आठ मिनिट हो चुके थे उसने एक बार फिर से सुन्दर सी नये डार्क पिंक डायल की नन्ही सी घड़ी पर दृष्टि डाली.....समय हो गया था.....आज उसे अपनी शक्ति की परीक्षा देनी थी.....उसने गीले गीले से लिपटे लिपटे से हिलते जुलते से स्वर में कहा था। "नीला ! यह मेरी जिन्दगी और मौत का सवाल है.....अगर इस बार रह गया तो फिर समझो कि मेरी तो जिन्दगी ही खतम हो गई....."

"तो मैं क्या करूँ ?" उसके स्वर में न तो प्रश्न की जिज्ञासा थी और न बेबसी की चीख.....थी बस हलकी सी उकताहट....क्लब के रंगीन वातावरण में सुनीला को यह सब कुछ पसन्द नहीं था.....उसे गिड़गिड़ाना नहीं आता भले ही वह प्रणय भिक्षा ही हो, उसे प्रार्थनाएं अच्छी नहीं लगती भले ही वह उससे ही की जायें.....उसे बेबसी से चिढ़ है भले ही वह उसके आश्रितों की ही हो.....शोरी की तो यह दूसरी बार की गिड़गिड़ाहट थी, प्रार्थना थी बेबसी थी.....और सुनीला उससे चिढ़ने ही वाली थी..... बस चिढ़ उठने वाली थी.....

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अपने आप से पूर्णतया सन्तुष्ट होकर·····डार्क पिंक सुनहले बार्डर का पर्स दाहिने हाथ की दो अंगुलियों में झुलाती हुई सुनीला को बरामदे से बाहर निकलते निकलते ही देख लिया धीरा ने·····धीरा बड़ी ही प्यारी लड़की है·····

"कहाँ चलीं दीदी ?"

"चल हट, यू जाते जाते न टोका कर। काम से जा रही हूं·····"

"हूं, तुम्हारे काम जैसे हम नहीं जानते ?"

"क्या खाक जानती है यही ना कि तेरे लिये चाकलेट लेने जा रही हूं या गुड़िया या गुड्डा·····" कह कर सुनीला जोर से हँस पड़ी·····वह खुश दिल है बाई बर्थ·····

धीरा को अपने गत चौदह वर्ष जो कि उसने इसी धरती पर बिताये थे अपमानित होते जान पड़े·····वह क्या अभी तक नन्हीं बच्ची है·····वह क्या चाकलेट के पीछे मरती है·····उसे चाकलेट पसन्द है पर यह दीदी इसी एक बात पर यूं जब तब हंसी उड़ा दें यह उसे पसन्द नहीं है·····वह खूब समझती है·····सब समझती है·····वह क्या नन्हीं बच्चा है·····

"जी हां वह कार में जो बैठे हैं उन्हीं के लिये चाकलेट लेने जा रही हो दीदी·····" और हंसते हंसते धीरा भाग गई·····सुनीला खिलखिलाकर हंस पड़ी·····और चलते चलते उसने एक बार और पर्स से शीशा निकाल कर लिपस्टिक ठीक की·····कार उसे लेने आयेगी किन्तु कार में कौन बैठा है यह उसे मालुम नहीं था·····लेकिन यह जान कर कोई बैठा है वह जल्दी जल्दी सीढ़ियां उतरने लगी·····'

उसे याद आया कि शोरी ने पहली बार उससे प्रणय की भिक्षा मांगी थी बड़े ही दीनतापूर्ण·····भावुकता भरे लहजे में·····चांदनी भरी रातों के गीत गाकर·····तारों की छांव की दुहाई देकर·····कलेजा लबों पर फैला कर·····और·····और·····वह हंस पड़ी थी बे साख्ता·····खिलखिला कर·····वह भौंचक्का सा उसकी ओर देखता ही रह गया था·····हंसी थम जाने पर हंसते हंसते आंखों में भर आये आंसुओं को रूमाल के नर्म किनारे से सुखाकर·····पर्स खोल कर उसके शीशे में देखते हुए, झांकते हुए लिपस्टिक ठीक करके उसने बड़े इत्मिनान से कहा था·····"काश कि तुम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

भिखारी होते और इस तरह गिड़गिड़ा कर दो चार पैसे मांगते·····सच कहती हूं मैं बड़ी अदा से तुम्हें इस तरह पर्स से निकाल कर अठन्नी दे डालती और तुम लेकिन जाने दो·····आज से हम दोनों मित्र हो सकते हैं लेकिन इस शर्त पर कि तुम रोना धोना नहीं करोगे·····मुझे यह सब सरत नापसन्द है·····" शोरी उर्फ "किशोरी लाल रमणीक" उस समय तो न जाने क्रोध अथवा निराशा अथवा किसी और ऐसी ही भावना के वशीभूत होकर रूठकर चले गये थे लेकिन तब से यह मित्रता लगभग स्थाई ही हो गई थी·····।

और फिर दूसरी बात उस दिन·····"तो मैं क्या करूँ ?"

"तुम बहुत कुछ कर सकती हो नीला"

"बटरिंग तो रहने दो·····बात कहो काम की"

"तुम मेरी सहायता करने का बायदा करो तो·····"

"शोरी तुम बिलकुल बच्चों जैसी बातें करते हो। कायदा सायदा सुनीला नहीं किया करती पर तुम्हारी तुम जैसे मासूम बच्चों की मदद जरूर कर दूंगी।"

उसने कुछ ऐसे ढंग से कहा कि वह पैंतीस वर्षीय कर्मठ देश सेवी भी हंस पड़ा। तुरन्त ही कुछ सम्हल कर उसने कहा·····"बटरिंग नहीं, वह काम ही ऐसा है जो कि तुम्हारे किये ही हो सकेगा·····" होठों के दोनों किनारे फैल भर सिकुड़ गये·····माथे के बल एक बार सिकुड़ कर फैल गये और क्षणेक उसकी ओर देख कर सुनीला खिलखिला कर एक बार हंस पड़ी ·····एक बारगी बुद्धू की भाँति श्री युत किशोरी लाल रमणीक ने अत्यन्त दयनीय दृष्टि से, उस खिलखिलाती किशोरी की हंसी से मिची मिची सी आँखों की ओर सहमती हुई सी दृष्टि से देखा और फिर जेब से शुद्ध खादी का श्वेत जगमगाता रूमाल निकाल कर माथे पर आता पसीना पोंछ डाला।

"अच्छा ? एक बार और माफ किया·····मूर्ख राज। काम की बात कहो यह गिड़गिड़ाहट क्यों·····कहते कहते सुनीला ने लकब के रंगीन वातावरण में रंग बिरंगी मेज पर रखे हलकें से सुनहले से रंगीन पदार्थ से भरे गिलास पर एक हलकी सी दृष्टि डाली·····अगुंलियां थिरक उठीं·····

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कल्पना हंस उठी·····किशोरी लाल की हिम्मत टूट रही थी·····गले में कुछ गोला सा अटक अटक सा रहा था·····

सुनीला ने एक हलकी साँस अत्यन्त नाटकीय ढंग से छोड़ते हुए कहा—"कुछ बोलो भी·····नहीं तो वह देखो·····बन्नू आ रहा है·····"

"और तुम उसी के तो इन्तजार में थीं ना"·····स्वर में ईर्ष्या स्पष्ट थी ·····जलन धीमी धीमी आंच की भांति सुलग रही थी·····

"तो तुम क्यों जले जाते हो ?"

किशोरी लाल रमणीक झेंप कर रह गये·····जबरदस्ती मुस्कराहट ओठों पर खींच घसीट कर लाने का प्रयत्न करते हुए उसने कहा—"जाने दो ·····आज उसे लिफ्ट न दो नहीं तो मेरी बात रह ही जायेगी·····"

"ठीक·····मंजूर·····तथास्तु·····अच्छा अब अपनी बात कहो।"

"तुम तो जानती हो मैंने जीवन भर के लिए देश सेवा·····"

"जानती हूं, सुन चुकी हूं एक बार नहीं हजार बार सुन चुकी हूं····· हाँ तो तुमने महाशय शोरी·····मेरे नन्हें शोरी·····मेरे अच्छे शोरी····· तो तुमने भरी जवानी में·····नहीं·····नहीं उठती जवानी में देश सेवा का कठोर व्रत लिया था·····और फिर····"

किशोरी लाल का मुँह लाल हो आया·····उसे सूझ नहीं रहा था कि वह क्या करें·····

"भई ! तुम तो यूं ही बनाती रहती हो·····"

"किसे ? तुम्हें ? मेरी क्या मजाल है अरे तुम तो बने बनाये गधे हो ईश्वर जाने किसने तुम्हें एम० एल० ए० बना दिया·····"

"एम० पी०"·····शरमाते हुए सुधार सा करते हुए किशोरी लाल ने कहा·····

"हाँ, हाँ·····वही सही··· ··· अच्छा फिर असली बात कहो·····किसी को परमिट दिलाना है या डेपुटेशन·····या·····या किसी की घज्जियां उड़वानी हैं·····सब कुछ हो सकता है·····इस वक्त कई पेपर मेरे हाथ में हैं·····"

बड़े रहस्यमय ढंग से धीमे धीमे मुस्कराते हुए कबाब का जरा सा टुकड़ा तोड़ कर मुंह में डालते हुये सुनीला ने किशोरी की ओर देखा·····

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"सच शोरी अगर तुम यह घास पात का वहम छोड़ दो तो तुम्हें मालूम पड़े कि दुनिया में कैसी कैसी ला जवाब स्वादिष्ट चीजें भरी पड़ी हैं..... यह कबाब....."और उसने फिर गिलास से एक घूंट लिया।

"बात यह है कि....." किशोरी ने गले मे उठता बगूला बरबस मुंह में लाये थूक के घूंट को निगलते हुए दबाया.....

आखिरी सीढ़ी पर पजे टेककर सुनीला ने बड़ी अदा से कार से भीतर झाँका। आशा के अनुरूप किशोरी लाल श्वेत झिलमिलाते वस्त्रों में लकदक पीछे की सीट पर सिर टिकाये लेटने के से अन्दाज में बैठे थे.....

सुनीला ने शरारत स मुंह से सीटी सी बजाई। किशोरी लाल चटपट अटेन्शन हो गये....."कार का द्वार खोलते हुए ड्राईवर को लगभग पीछे ढकेलते हुए शोरी उर्फ किशोरी लाल ने हाँक लगाई।

"खूब, खूब आज तो विश्व विजय निश्चित है....." और अपने मज़ाक पर स्वयं हलकी सी हंसी बिखेर बैठे। सुनीला ने तनिक सी अदा से सिर झुका कर, तनिक सी लटपटी सी मुस्कराहट से शोरी को निहाल करके अभिवादन स्वीकार कर लिया..... "

कार स्टार्ट हो चुकी थी। सुनीला कुछ व्यवस्थित हो चुकी थी। शोरी कुछ कुछ घड़कते हुए दिल की धड़कने सम्हाल चुके थे।

"मेरी सेवाओं की चर्चा खूब अच्छी तरह करना नीला।"

"हूं" शायद सुनीला का ध्यान उधर नहीं था। शायद शोरी की बातें उसके लिये कुछ अधिक महत्व नहीं रखती थीं। शायद वह कुछ सोच रही थी।

शोरी ने उस दिन बड़ी कठिनाई से बहुत रुक रुक कर यहाँ तक कि बन्नू उर्फ बनवारी लाल सिन्हा के इस टेबिल तक पहुंचने के कुछ ही मिनिट पूर्व बड़े ही मातमी लहजे में सुनीला को बताया था कि उसकी प्रेस्टीज खतरे में है....."उसकी जिन्दगी और मौत का सवाल है उसके दुश्मनों की संख्या बढ़ गई है....."सब लोग उससे जलते हैं ना और..... ...और....."अब शायद यह कोशिशें हो रही हैं कि उसे टिकट ही न मिले.....

सुनकर बड़े इत्मिनान से सुनीला ने कहा था—"तो क्या हुआ शोरी तुम भूखे तो मर नहीं जाओगे रोते क्यों हो ?"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"बात रोटी की नहीं है सुनीला·····इज्जत की है····मैंने देश सेवा····"

"तुमने देश सेवा की है इसमें किसे सन्देह है·····सिर्फ पचास हजार ही का तो ठेका था ना जिसमें तुमने सिर्फ पन्द्रह हजार ही तो बचाये थे····· और और·····वह परिमिट·····"

"तो क्या मैंने ही अकेले यह सब किया है और सब दूध के धोये हैं·····"

"कौन कहता है लेकिन जाने दो क्या रखा है इन बातों में देखो वह बन्नू आ रहा है। जरा उसे इधर बुलाना तो कई दिन से उसकी शीराजी के हाल चाल नहीं मिले··· ····कुछ छेड़ छाड़ तो की जाये·····"

"पहले यह तय कर लो कि अब तुम्हें ही यह काम करना होगा।"

"कौन सा काम ?"

न जाने कैसे गले के भीतर की कुण्ठा को ठेल ठाल कर पीछे ढकेल कर किशोरी लाल ने कहा--"टिकट दिलाने वाला"

"मैं करूँ ?" सुनीला खिलखिला कर हंस पड़ी "लेकिन मैं तो तुम्हारे दल की हूं नहीं।"

"तो उससे क्या हुआ ? तुम्हें कौन नहीं जानता·····" स्तुति मन्त्र के बोलों को बीच ही में काटते हुए अचानक सुनीला बोल उठी "शायद कोई नहीं। लेकिन तुम्हारे काम मैं जरूर कर दूंगी मेरे भोले शोरी·····" और हाथ के इशारे से बन्नू उर्फ डा० बनवारी लाल सिन्हा को बुला ही लिया। शोरी को यह पसन्द तो नहीं आया लेकिन करता क्या, उपाय ही क्या था ·····उसकी सुनीला से मित्रता थी अवश्य और वह मित्रता घनिष्ट भी थी किन्तु सुनीला कोई पिंजरे की मैंना तो है नहीं·····मित्रता के नाते वह एक बहुत ही अच्छी सखी अवश्य है किन्तु क्रीतदासी थोड़े ही है भला शोरी उसे कह ही क्या सकता है और फिर इस समय गरज भी तो उसी की है।

वह खिसिया कर रह गया किन्तु ग्यारह साढ़े ग्यारह बजे जब सुनीला उठी तो उसने शोरी से बड़े प्यार से कहा—"चलो, शोरी, घर तक तो पहुंचा दो·····" और शोरी खिल उठी। सुनीला बन्नू उर्फ डा० बनवारी लाल सिन्हा या कुन्दी उर्फ श्री कुन्दन लाल शर्मा अथवा ऐसे ही किसी अन्य मित्र के रहते हुए किशोरी लाल को कभी भी घर तक पहुंचाने का कष्ट या सौभाग्य नहीं दिया करती है वह अत्यधिक व्यस्त है इस लिए अथवा उसकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पुरानी कार आवाज ज्यादा करती है इस लिये या सिर्फ इसी लिये कि वह उसका कुछ बहुत पुराना मित्र नहीं है किशोरी लाल तो फूल ही उठा कौन जाने गर्व से या·····या·····किसी और भावना से·····"

"नीला देखो, यदि किसी तरह तुम उनको राजी कर सको"·····गीली गीली सी गिड़गिड़ाहट से उसे चिढ़ थी।

"देखो शोरी ! नीला जो काम हाथ में लेती है उसे करके ही छोड़ती है।"

"यही तो, यही तो·····वह मुझ से न जाने क्यों इतने चिढ़ गये हैं। मैंने तो सदा उनका ही साथ दिया है और आज भी·····" वह कहे जा रहा था। कार तेजी से बढ़ी जा रही थी ड्राईवर की सधी अंगुलियाँ स्टेयरिंग पर जमी जा रही थीं·····तारकोल की चिकनी सुरमई सी सड़क मानों भागी जा रही थी और·····

उस दिन गहरी आधी रात के सन्नाटे में इसी तरह किशोरी लाल रमणीक की कार में·····उसकी बगल में बैठी हुई सुनीला ने उसे अन्तिम आश्वासन दे दिया था·····हँसते-हँसते सुनीला ने कहा था "मेरे अच्छे शोरी मैंने सोचा है कि मैं तुम्हारी सहायता करूंगी अब बताओ कि मुझे करना क्या होगा ?"

"मार लिया·····तब तो भई काम बन ही जायेगा।" खुशी से नाच कर वह चीख उठा। सुनीला को जान पड़ा कि आधी रात के सन्नाटे में कोई पागल कुत्ता चीख उठा है·····

"छीः छीः क्या बच्चे बन रहे हो।"

किशोरी लाल सम्हल गया·····उसने कुछ ठहर कर कहा—"तुम्हें वहां चलना होगा·····बस सिर्फ ऐक आदमी को कन्विन्स करना है और फिर काम फतह·····"

"और तुम उसे कन्विन्स नहीं कर पाये ?"

"नहीं पर तुम्हारी पर्स नैलटी·····"

घर के सामने कार ठहर गई थी·····

"अच्छा तब परसों आना·····टाईम टेलीफोन पर तय कर लेना·····अभी तो बहुत थक गई हूं·····टा···टा·····" उतर कर जाते जाते नीला ने कहा था·····

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बंगले के भीतर खूबसूरत पौधों की कतार से लगभग छूती छूती कार पोर्टिको के बाहर ही रुक गई थी.....

खूबसूरत सैन्डल सहित गोरे गोरे चरण ज्यों ही धरती पर पड़े..... सुनीला मन ही मन हंस पड़ी.....वह आई है कन्वैसिंग करने.....कन्विन्स करने.....किसी एक मित्र को ऐलेक्शन लड़ने के लिये दल का टिकट दिलवाने को.....पर वह कौन है कुछ कहने वाली.....उसे अधिकार ही क्या है और उसे मतलब ही क्या है इन सब बातों से.....

सुबह सुबह ब्रेकफास्ट टेबिल पर पौरिज का चम्मच मुंह में रखते हुए भी उसने यह सब कुछ सोचा था.....लेकिन शोरी मानता ही कहाँ है वह तो कहता है कि सुनीला के चले जाने से ही उसका काम बन जायेगा.....और वह शोरी को अपने शोरी को.....उस बेवकूफ शोरी को खोना नहीं चाहती जिसने पिछले वर्ष ही उसे कलकत्ते से रेडियोग्राम प्रेजेन्ट लाकर दिया था .....जिस दम पर वह कभी कभी.....खैर जाने दो वह सब कुछ सुनीला को एक्सपेरिमेन्ट अच्छे लगते हैं.....रूटीन जीवन में वे कुछ नवीनता तो ला देते हैं सुनीला ने सोचा चलो यह भी एक अच्छा खासा एक्सपेरिमेन्ट रहेगा.....ऐडवेन्चर ही सही.....यूं वह इन लोगों से मिलती जुलती रहती है उसका प्रोफेशन ही ऐसा है लेकिन.....लेकिन खैर.....

"चलिये सरकार.....' चपरासी ने दबी सी आवाज से कहा.....

"चलो शोरी....."

"नहीं, तुम्हीं जाओ। मेरी आवश्यकता समझो तो बुला लेना। मैं तो इनसे दिन में कई बार मिलता ही हूं....."

"हूं" कह कर सुनीला खट खट करती हुई भीतर की ओर बढ़ गई..... किशोरी लाल रमणीक रईस और बेंकर उसकी तीन इंच की स्टील हील की ओर देखते ही रहे.....

उनींदी सी थकी थकी नशीली सी आंखों से जब अन्तिम बार एक हलकी सी नजर सुनीला ने आखिरी बार दर्पण पर डाली तो उसे जान पड़ा कि वह वह नहीं है.....उसका जी चाहा कि वह लौट पड़े पलट पड़े लेकिन..... लेकिन.....उसने कहा था....."देवी जी ! आप जैसी सुसंस्कृत महिलाओं की तो हमें अत्यधिक आवश्यकता है....." उसकी आवश्यकता है.....

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

उसकी किसी को भी आवश्यकता कभी हो सकती है इसकी तो उसने कल्पना भी नहीं की थी·····उसे मित्रों का अभाव नहीं था·····प्रशंसकों की भी कमी नहीं थी·····साथियों का भी टोटा नहीं था फिर भी कभी किसी को उसकी नितान्त आवश्यकता हो सकती है यह उसने किसी दिन भी नहीं सोचा था·····सोचने का समय ही उसे कब मिला था अवसर ही कहां था वह जर्नलिस्ट थी बाई प्रोफेशन और खुश दिल थी बाई बर्थ·····पर्सनैलिटी हां ·····उसकी पर्सनैलिटी कोई किसी से कम थोड़े ही है·····लेकिन लेकिन ·····शोरी·····मेरा शोरी·····

"नहीं, नहीं किशोरी लाल रमणीक क्या चीज है·····आप एक बार हां भर कर दें फिर देखिये मैं आपको कहां से कहाँ पहुंचाता हूं·····देखिये आप कुछ मत कहिए·····आप सन्तुष्ट हैं लेकिन मैं तो सदा से ही आप जैसी हस्ती को····· बस क्या कहूं कि मैं आपके लिये क्या सोचता रहता हूं·····"

"लेकिन आप तो मुझसे विशेष परिचित भी नहीं है।"

"उससे क्या होता है ? मैं आपको जानता हूं और फिर आपकी पर्सनैलिटी ·····आपका कलचर·····ऐसी महिला का स्थान तो····" दर्पण में दिखाई देते हुए जूड़े का ऊपरी भाग कुछ ऊंचा जान पड़ता था सुनीला ने एकबार फिर से खोल कर जूड़ा बनाना आरम्भ कर दिया····· शोरी क्या कहेगा लेकिन·····मैं क्या करूं·····वह तो जैसे पीछे ही पड़ गये·····जूड़े में अन्तिम पिन लग ही नहीं रहा था·····बालों की एक हलकी सी लट माथे पर मचल मचल रही थी·····और सुनीला ने घड़ी पर दृष्टि डाली····· अभी दस मिनट थे·····उसने तिपाई पर रखी हुई शुभ्र श्वेत उज्ज्वल साड़ी पर दृष्टि डाली·····मैचिंग ब्लाउस·····सादे से कट का पास ही रखा था·····चप्पल में पैर डालते हुए उसने एक बार फिर दर्पण पर दृष्टि डाली सूरत बड़ी भोली भोली सी लग रही थी प्यारी प्यारी सी····· होंठ कुछ रूखे रूखे अवश्य थे किन्तु मन भरा भरा सा था·····एम० पी०·····एम० पी० डिप्टी मिनिस्टर····· नहीं·····नहीं पहले पार्लियामेन्टरी सेक्रेटरी····· अरे नहीं वह सब नहीं····· डिप्टी मिनिस्टर·····कैबिनेट·····एकाएक सुनीला जोर से हंस पड़ी·····कैसे खूबसूरत मुग़ालतों में उलझ पड़ी है वह कैसे हसीन ख्वाब हैं मगर हैं ख्वाब ही, स्वप्न ही और सपने क्या सच भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

होते हैं·····हो सकते हैं·····उसने कहा था·····

"बस तुम देखे जाओ कि मैं क्या क्या कर सकता हूं"·····तीसरे दिन की ही तो बात थी।·····उसकी मुस्कराहट फैल गई·····फूल गई और हंस उठी·····और तभी दर्पण में उसे एक परिचित सी छाया दिखाई दी·····

सुनीला मुड़ कर खड़ी हो गई उसने देखा कि दरवाजे का पर्दा सिकुड़ा सिकुड़ा भी वैसा ही राड के ऊपर रखा है जैसा कि नौकरानी ने कमरा साफ करते समय रख दिया था और फिर शायद ठीक से गिराना भूल गई थी··· ····सुनीला शायद मन ही मन लौट आई किन्तु हलके हलके हिचकते हिचकते·····

"आओ·····आओ शोरी·····आज कई दिनों पर दिखाई दिये·····" और फिर मुस्कराहट खिल खिला उठी·····किशोरी की बुझी बुझी सी आंखों में ठंडी ठंडी सी आग, शोले रहित·····चिन्गारी सहित आंच जल रही थी उसके दोनों होंठ कांप कांप उठते थे किन्तु वह चुप था।

"चलो, नीचे चलें ड्राइंग रूम में·····"

"अभी जाना ही है।" किशोरी ने एक उचटती हुई सी दृष्टि तिपाई पर रखी श्वेत, स्वच्छ, उजली उजली सी साड़ी पर डाली·····"

"शायद कहीं जाने की तैयारी है।"

"हाँ" स्वर में उकताहट थी बेचैनी थी। सुनीला ने कलाई घड़ी पर एक दृष्टि डाली·····हलकी सी लापरवाही भरी सी·····

"सुना है टिकट मिल गया" चिलचिलाती हुई तपती तपाती हुई जेठ की दुपहरी सा स्वर तड़फ उठा था·····निर्मम करुण·····"

"हाँ, लेकिन तुम्हें नहीं मुझे" उल्लास से अधिक लालसा भर चुकी थी स्वर में·····सुबह के उजाले में दर्पण की ओर पीठ करके खड़ी हुई सुनीला भी मुस्कराती हुई सी आंखों में अपनी जलती बलती आखें डालते हुए कहा किशोरी लाल रमणीक ने

"सुना तो है"

अच्छा, मुझे तो अब पार्टी आफिस में जाना है। तुम फिर किसी समय मिलना शोरी·····कहते हुए सुनीला ने पास ही तिपाई पर रखी हुई श्वेत, स्वच्छ उज्ज्वल साड़ी उठा ली·····

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

किशोरी लाल रमणीक बिना कुछ कहे सुने बाहर चला गया "आपको टिकट दिला सकता हूं किशोरी की बात जाने दीजिये हमें तो बस आप ही जंच गई हैं अब आप देखती भर जाये....."

उसने पर्दा गिरा दिया साड़ी बदल कर ज्योंही वह बरामदे में आई कि धीरा ने आकर कहा "दीदी ! वह तुम्हारा क्या कहा करती हो.....हां शेरी नहीं नहीं शोरी तो मुंह लटकाये अभी नीचे गया है और तुम....."

"तो तू भी साथ चली जाती" शरारत से पुरानी सुनीला ने कहा "बड़ा रहम आ रहा था तो....."

"वाह दीदी ! तुम भी वैसी बातें करती हो.....अच्छा दीदी तो तुम सचमुच लीडर बन रही हो....."

"लीडर तुम तो जन्मसिद्ध हो सुनीला ऐसी पर्सनैलिटी, इतना तेज..... यहां क्या तुम तो किसी दिन अर्न्तराष्ट्रीय पौलिटिक्स में चमक उठोगी....."

अभ्यासवश उसने पर्स खोल कर शीशा निकाला किन्तु होठ फीके-फीके से दिखाई पड़े.....पर्स बन्द करते हुए उसने बहुत गम्भीरता से कहा–"धीरा अब मैं देश सेविका हूं....." उसकी दृष्टि में अपने फीके-फीके होंठ घूम उठे किन्तु उन्होंने कल ही कहा था "सुनीला जी ! आप तो ऐडुकेटेड हैं यहाँ तो न जाने कितने अनऐडुकेटेड लोगों को न जाने कहाँ से कहाँ पहुंचा दिया किन्तु....."

फटर.....फटर करती हुई चप्पल सीड़ियां गिनती जा रही थी..... सुनीला को जान पड़ा कि वह पौलीटीशियन है बाई प्रोफेशन हो गई है और गम्भीर है.....सादी है.....कर्मठ है बाई बर्थ.....और वह स्वयं मन ही मन धीरे धीरे मुस्करा दी.....हौले हौले से और वह उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे पार्टी के दफ्तर में.....वहीं जहां एक दिन वह गई थी शोरी के साथ उसकी कार में उसके काम से.....उसी काम से जो हो गया किन्तु शोरी के लिये नहीं सुनीला के लिये क्योंकि वह है देश सेविका पौलिटीशियन बाई प्रोफेशन बाई बर्थ.....बाई बर्थ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

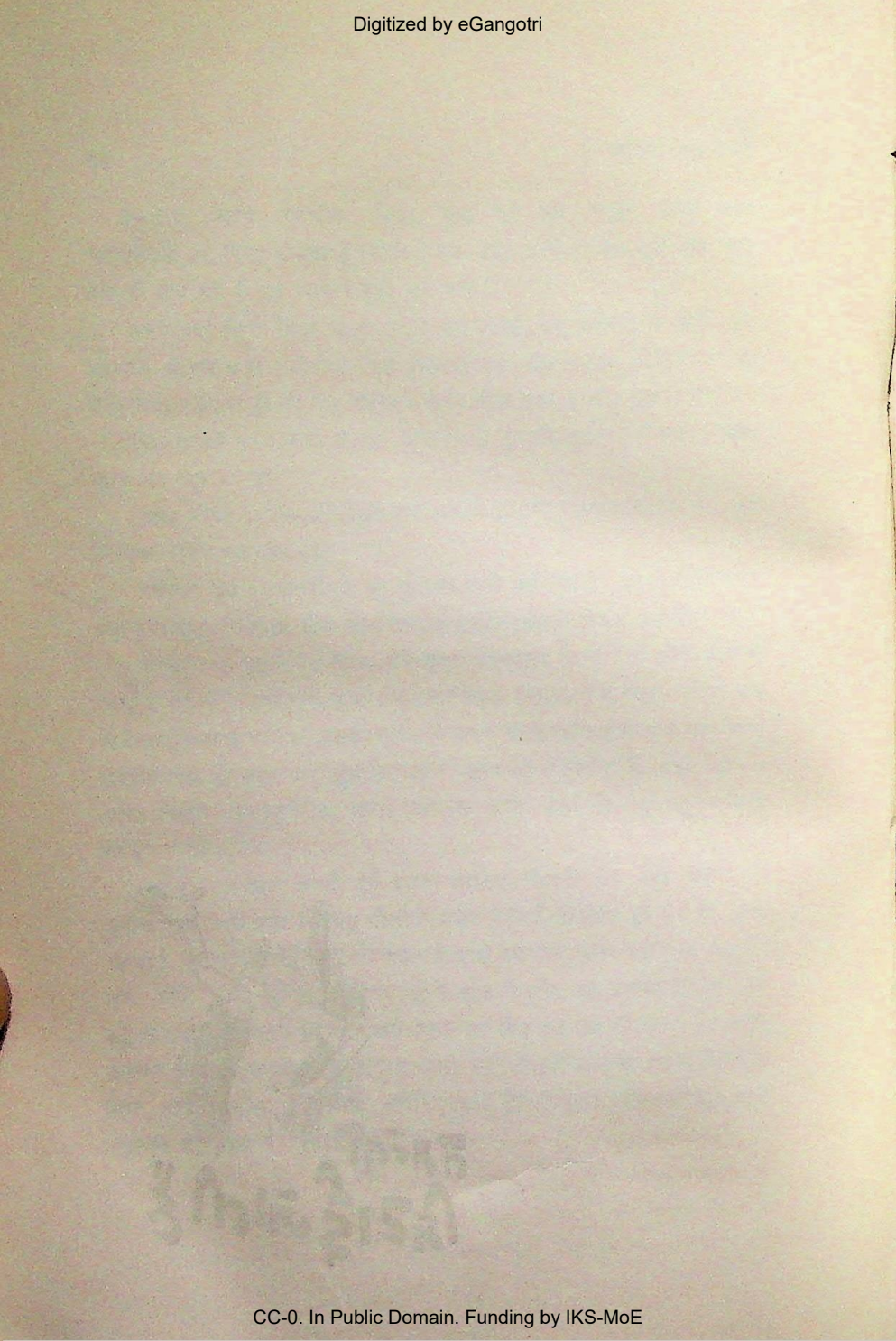

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

तमन्ना मिटाई जाती है

सुलझे-सुलझे से गुंथे-बिंधे से स्वरों की अन्तिम लहरी तक पहुंचते-पहुंचते दो बिजलियाँ-सी कौंध गयीं। गहरी-गहरी ही उतरती चली जा रही वह दृष्टि उसके अन्तर में।.....बना-बना कर तमन्ना मिटाई जाती है। सच ही तो तमन्नाएं बना-बना कर ही तो मिटा दी जाती हैं। तमन्ना.....इच्छा.... आकाक्षाएँ। और, एक बार फिर अचानक उठी हुई वह दृष्टि टकरा गयी। उसकी भटकती-भटकती नजरों से। हाथ का चप्पू छुट-छुट-सा गया। उसे लगा कि वह काँप रहा है। 'यह सब क्या है'—और, वह सिहर उठा। हलकी-सी गर्मी पड़ने लगी थी और उस दिन तो प्रातः से ही दिन कुछ भरा-भरा-सा लग रहा था फिर भी उसे जान पड़ा कि वह ठिठुर रहा है। नाव नदी के वृक्ष पर चली जा रही थी। साथियों में से कुछ तो प्रशंसा में लगे हुए थे और कुछ अनावश्यक स्तुति में, किन्तु उन मीठी-मीठी बातों और गहरे-गहरे कहकहों के बीच भी मानों उसे बोलने की प्रेरणा मिल ही नहीं पा रही थी और तभी आते सुना कि कोई एक मीठी-मीठी-सी सुरीली-सी आवाज गूंज रही थी, तैर उठी थी हवा की लहरों पर। "सुना है सतीश जी कवि हैं।"

"क्या बोर टापिक शुरू कर दिया। कहाँ यह गज़ल और कहाँ वह और उसकी कविता।" यद्यपि उत्तर में जो कुछ कहा गया था वह कोई नयी बात नहीं थी। यहाँ तक कि सतीश के दोनों कान भी उसके चिर अभ्यस्त थे फिर भी इस समय सतीश को सुन कर कुछ अच्छा लगा और तभी किसी ने उसकी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

ओर मुखातिब होकर कहा—"सतीश, सुना दे न एक कविता।"—सतीश का जी चाहा कि कह दे—'नहीं सुनाता, नहीं सुनाऊँगा, कभी नहीं सुनाऊँगा! बोर कर देता हूं न मैं तो तुम सबको!' लेकिन तभी उसकी दृष्टि जा मिली उन अत्यन्त उत्सुक दो आँखों से। मानों कह रही हों अपनी मौन मूक भाषा में—'बना-बना कर तमन्ना मिटाई जाती है। तरह-तरह से वफा आजमाई जाती है।' उसके मुखसे अचानक ही तो निकल गया—"अच्छा!"

बात यूं हुई कि उस दिन सुबह-सुबह रमेश अपने दो साथियों को लेकर सतीश के होस्टल में ही पहुंच गया। रात को देर तक पढ़ने की यादगार लाल आँखों में लिए सतीश कंधे पर तौलिया डाले, हाथ में बिनाका पेस्ट लिए बाथरूम की ओर जाने का उपक्रम कर ही रहा था कि सुन पड़ा—"ओ कवि महाशय दस मिनट दिये जा सकते हैं तुरन्त तैयार हो जाओ।"

"क्यों? क्यों? क्या बात है?"

"बस ऐसी ही बात है। चल-चल जल्दी कर, आज पिकनिक होगी।"

"पिकनिक? यह बेवक्त की पिकनिक कैसी?"

"पिकनिक और वक्त·····बस आठ मिनट रह गये हैं जल्दी कर, नहीं तो ऐसे ही उठा ले चलेंगे।"

"वाह री किडनैपिंग पार्टी!" कह कर सतीश हँसता हुआ चला गया। इतना तो वह समझ ही गया कि आज का दिन गया। सतीश यह जानता था कि उसे पढ़ना है, पास होना है और यदि हो सके तो फर्स्ट भी आना ही होगा यद्यपि वह कभी फर्स्ट नहीं आ सका है और हर बार परीक्षा परिणाम समाचार पत्र में अथवा यूनिवर्सिटी के बोर्ड पर देखते-देखते जब उसकी भाव-पूर्ण आँखें थकने-सी लगती हैं तभी कहीं सूची के अन्त में उसे अपना नाम अथवा रोल नम्बर दिखाई पड़ता है और उसी सुन्दर आँखों में एक चमक-सी दौड़ जाती है और·····और·····।

रमेश को तो शायद पढ़ना-लिखना अच्छा ही नहीं लगता। एक दिन बड़ी ही बेबसी में उसे सतीश की आवश्यकता पड़ गयी थी—गहरी घनी आवश्यकता। किन्तु वह बात तो और भी पुरानी है। उस समय की है जब दोनों भूख लगने पर मचलने लगते थे। उसके सामने अतीत नाच उठा—गाँव के सरपट्टी के स्कूल के एक कोने में रखा मास्टर साहब का पुराना घड़ा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

रमेश ने शरारतन पत्थर मार कर तोड़ दिया था। तभी मास्टर साहब का कड़ा बेंत रमेश की पीठ पर पड़ा था और मास्टर साहब ने उसे मुर्गा बना दिया था। तब मास्टर साहब की नजर बचा कर सतीश ने उसे घर भगा दिया था। यह दूसरी बात है कि फिर दूसरे दिन सतीश को बहुत मार पड़ी थी और रमेश का स्कूल जाना ही बन्द हो गया था। किन्तु दोनों ही साथ-साथ चलते रहे फिर जमाना भी तो कितना बदल गया। बदलता ही गया। रमेश के पिता परचूनिये से बिजनेसमैन हो गये और सतीश के पिता नौकरी से पेंशन पाकर घर बैठ गये। शहर की जिन्दगी दोनों की ही नसों में रम गयी। लेकिन सतीश को तो पढ़-लिख कर नौकरी ही करनी होगी पर रमेश का क्या, चलती बिजनेस में वह भी समा जाएगा। फिर है भी तो इक-लौता ही।

दस बारह मिनट के बाद जब सतीश कमरे में लौट कर आया तो कमरा भरा हुआ था। उसने कुछ चिल्ला कर कहा—"कमबख्तो, कपड़े बदलने की सुविधा तो दे दो। ऐसी भी क्या एमरजेन्सी है पिकनिक की।" और कहते-कहते वह झेंप गया। रमेश के पहले दो साथियों के अलावा भी एक मूर्ति थी इस बार। वह अचकचा गया। उसे अपना कमरा अजनबी-सा लगा। संग-मरमर-सी श्वेत चिकनी गर्दन ज्यों ही बायीं ओर घूमी कि पीठ पर से खिसक कर पल्ला कुछ बायीं ओर हो गया और सुडौल गर्दन का निचला हिस्सा लो-कट ब्लाउज के ऊपर ही ऊपर से कुछ चमकने-सा लगा।

उसकी दृष्टि उसी ओर लगी हुई थी। वह अब भी गुनगुना रहा था।

"उल्लू।"

"काठ का ?" उसने हँस कर साथी को उत्तर दिया और दोनों धीरे से मुस्करा दिये। फिर दोनों ने आगे बढ़ कर एक-एक प्लेट दो सुडौल संगमर-मर से श्वेत कोमल हाथों से ले ली और फिर दोनों एक दूसरे की ओर देख कर मुस्करा दिये। प्लेटें भरती गयीं और दोनों मुस्कराते रहे। 'किन्तु यह सब तो पुरानी बातें हैं। एकबारगी पुरानी बिलकुल पुरानी।' स्वयं से कह कर वह स्वयं उदास-सा हो गया। उसे जान पड़ा कि उसके चारों ओर का वातावरण घूम रहा है बहुत तेजी से, एक दम चक्र की भाँति। सिगरेट के धुएँ से निकल कर उसके चारों ओर छाते हुए लच्छों में उसने देखा कोई एक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

मीठी-मीठी-सी याद उसे कसमसा रही है और वह उठ कर चल दिया। अभी कुछ ही कदम गया होगा कि अचानक ही वह खिल उठा—"ओह! तो ये ठाठ हैं और हम समझे कि जनाब किताबें घोंट रहे हैं।"

"यार, निकला तो था लाइब्रेरी जाने के लिए ही लेकिन·····लेकिन ·····अच्छा जाने भी दे।"

"तू मुझे समझता क्यों नहीं।"

"सुना दीजिए न सतीशजी!" ओह तो वह कहाँ खो गया था स्वप्नों में। सतीश पुरानी पिकनिक से, स्मृतियों में जीवित पिकनिक से वास्तविक, जागृत पिकनिक में आ गया।

"कुछ यूं ही सा कह लेता हूँ।"

"यूँ दिन भर बोर करता रहता है और आज नीना कह रही है तो नखरे दिखा रहा है।" आज न जाने क्यों सतीश को रमेश का रिमार्क खटक गया। उसने देखा कि दो हलकी-हलकी उनीदीं-सी आँखें उसी पर टिकी हुई हैं और वह हिल गया—भीतर-बाहर सभी ओर से।

"यदि आप बोर ही होना चाहती हैं तो लीजिए"—और गुनगुनाहट से आरम्भ होकर स्वर लहरी वातावरण में फैलने लगी। स्वर का दर्द स्वर की मिठास में घुल-मिलकर तड़प रहा था—

"दीप की लौ बुझी नहीं,
फिर क्या सुबह हुई नहीं,
गीत के बोल खो गये—
टीस क्या फिर उठी नही?"

सतीश को लगा कि वे दो सुन्दर आँखें उसी पर टिकी हुई हैं। कैसी थी वह प्रशंसा भरी दृष्टि, अपलक ताकती हुई आँखें। उसे जान पड़ा कि उसके गोरे गाल कुछ अधिक लाल होकर माथे पर बेतरतीब बिखरी हुई घुँघराली लट को और भी अधिक सुन्दर बैकग्राउण्ड दे रहे हैं। दोस्त उसे मजाक में कहा करते थे 'क्यूपिड' किन्तु उसे स्वयं घंटों दर्पण के सामने खड़े-खड़े अपने को देखना अच्छा लगता था। उसके उभरे-उभरे काले घने बाल, उसकी सुडौल नासिका, उसका पुरुषोचित वीरत्व से दीप्त भाल—सभी कुछ·····सभी कुछ तो आकर्षक है। और·····और उसका स्वर—

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कोमल, मीठा दर्द भरा स्वर और उसके गान, दर्दीले गान·····गीत के बोल समाप्त हो चुके थे। स्वर थम गया था। सबसे पहले रमेश ने ही कहा, "आज तो तूने गजब कर दिया यार! मैं नहीं जानता था कि तू इतना बढ़िया शायर है। हमें तो तू हमेशा बोर ही करता रहा।" सभी ने प्रशंसा की। यहाँ तक कि सदा की चुप रहने वाली रमेश की बहन सुरीला ने भी कहा—"सतीश भाई साहब, आप तो छिपे रुस्तम निकले।" किन्तु नहीं बोली तो वह पीली-पीली-सी लड़की, सुरीला की सखी। शायद बोलती रही उसकी भरी-भरी-सी सुन्दर आँखें! फिर और भी गाने हुए, कविताएँ भी हुई, शायरी भी हुई किन्तु नीना ने फिर नहीं गाया और नहीं गाया। सतीश के मन में अन्त तक गूँजता रहा—'क्यों अपनी जान के पीछे पड़े हो परवानों, ये शमा रोज जलाई-बुझाई जाती है।'

पिकनिक समाप्त हो गयी। घर लौटते समय कार में प्रायः सतीश भी चुप रहा और नीना भी, किन्तु बोलने वालों की कमी थोड़े ही थी। घर आ जाने पर नीना ने सतीश की ओर देखकर कहा—"सचमुच बहुत सुन्दर कविता करते हैं आप।" और, उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही वह एक छोटा-सा नमस्कार शायद रमेश को, शायद सतीश को और शायद दोनों को करके सुरीला से टाटा करती हुई द्वार के भीतर चली गयी। सतीश को जान पड़ा कि उसके भीतर कुछ हिल-सा गया, एकबारगी उखड़-सा गया और फिर·····

अचानक ही तीसरे-चौथे दिन वही लड़की सतीश को लाइब्रेरी के एकान्त कोने में अकेली बैठी दिखाई दी। सो भी शाम के अन्तिम क्षणों में। वह शायद कोई रेफरेन्सबुक देख रही थी, खूब झुकी हुई, खूब ध्यान से। उसके खूब गोरे शायद पीले-पीले से मुख पर एक आध गहरे काले बालों की लहर आ गयी थी। उसकी संगमरमर-सी श्वेत गर्दन से लिपटी हुई साड़ी की नीली किनारी बहुत ही भली लग रही थी। सतीश कुछ देर तक खड़ा उस नतमुखी सुन्दरी की ओर देखता रहा। तभी अचानक उसकी दृष्टि उठी, मिली और उसमें हर्ष की लहर-सी दौड़ गयी। सतीश निकट आ गया, बोला—"बड़ी देर तक पढ़ती हैं आप?"

"और आप भी तो!"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"मैं पढ़ नहीं रहा था। एक किताब लौटाना जरूरी था। यूँ मैं इस समय टेनिस खेलता हूँ।"

"ओ आई सी!"

"लेकिन पहले तो कभी आपको देखा नहीं यहाँ। यूनिवर्सिटी में भी शायद कभी देखने का सौभाग्य नहीं हुआ।"

"सौभाग्य होता कैसे? मैं यहाँ थी ही कहाँ? पापा की बदली हुए एक महीना ही तो हुआ है और हम लोग तो अभी आये हैं। उस दिन सुरीला जबरदस्ती पिकनिक पर ले गयी तो....."

"वह मेरी खुशकिस्मती थी।"

"अब तो यहीं पढ़ूँगी। फिर यह खुशकिस्मती देखिये कहाँ तक टिकती है?" कहकर वह मुस्करा दी। सतीश को जान पड़ा कि असंख्य फूल एक साथ ही खिल उठे।

"चलिए अब चलें। लाइब्रेरी तो बन्द होने ही वाली है।" नीना आगे-आगे चल रही थी और सतीश के पाँव तो धरती पर ही नहीं पड़ रहे थे। बाहर निकलकर लान की हरी-हरी घास पर चलते हुए सतीश ने बड़े अन्दाज से कहा—"आप खूब गाती हैं। सचमुच ऐसी गज़ल कभी नहीं सुनी थी इस बार नीना ने सतीश की आँखों में शरारत से झाँकते हुए कहा—"आपकी कविता की तारीफ नहीं करूँगी, यह समझ रखिये।"

सतीश को लगा कि वह झेंप जाएगा। किन्तु उसने तुरन्त कह ही तो दिया—"उसमें तारीफ करने लायक था ही क्या?"

"ओह! तब तो कुछ न कुछ आर्गूमेन्ट्स देने ही पड़ेंगे अपने प्रीवियस स्टेटमेन्ट को सपोर्ट करने के लिए। आप तारीफ करवाना खूब जानते हैं।" उसने कुछ ऐसे लहजे में कहा कि सतीश सचमुच झेंप गया।

"अच्छा चलिए, सुलह कर लें। आप एक अच्छे दोस्त जान पड़ते हैं। पापा आपसे मिलकर बहुत खुश होंगे।"

फिर दोनों मित्र हो गये। रमेश ने एक दिन सतीश से कहा भी था, "यार क्यूपिड, बड़ी जगह हाथ मारता है!"

"क्यों?"

"यार, बड़े आदमी की इकलौती लड़की है।" सतीश ने बनावटी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

उदासीनता भरे स्वर में कहा—"अरे अपने को क्या ? तेरी बहन की सहेली है इससे इतना मानता हूँ।"

"देख मुझसे बनेगा तो ठीक नहीं होगा।"

नीना के पिता पेशे से इंजीनियर, सूरत-शक्ल में एंग्लो इण्डियन और स्वभाव के अत्यन्त उदार प्रकृति के व्यक्ति थे। मिशन स्कूलों से निकलकर ताल्लुकेदारान कालेज, फिर न जाने कब यूनिवर्सिटी फाँदकर वे पहुंचे थे जर्मनी और जब चार-पाँच वर्ष यूरोप घूमघामकर वे लौटे तो उनके पास थी एक बढ़िया इंजीनियरिंग की डिग्री। किस्मत के धनी थे। आते ही एक विदेशी कम्पनी में बढ़िया-सी नौकरी मिली और साथ ही साथ उसी विदेशी कम्पनी के देशी साहब की सुन्दरी पुत्री तथा दहेज में बढ़िया चमचमाती कैडलक कार। फिर जिस वर्ष नीना का जन्म हुआ उसी वर्ष वे स्वयं कम्पनी के बड़े साहब हो गये। नीना उनके इहलोक के चिरइच्छित सौभाग्य की सन्देशवाहिका थी, अतः वह उनकी अत्यधिक लाड़ली थी और फिर नीना के बाद उनकी कोई सन्तान भी तो नहीं हुई। पापा और ममी शायद और कोई सन्तान चाहते भी नहीं थे और देशी-विदेशी मिली-जुली नर्सों के हाथों पलकर बढ़िया स्कूलों-कालेजों से होती हुई जब तक नीना यूनिवर्सिटी पहुंची तब तक उसे यह ज्ञान भली प्रकार हो चुका था कि संसार में उसका महत्त्व अत्यधिक है। लाड़-प्यार तो था ही, स्वतन्त्रता भी उसे कम नहीं मिली थी। कुशाग्रबुद्धि नीना जिन्दगी पर हावी होती चली गयी और जिन्दगी उसके लिए खुशगवार होती चली गयी। तभी उसकी जिन्दगी में आ गया नया दौर। प्रशंसा भरा, स्तुति भरा और मीठा-मीठा-सा, अच्छा-अच्छा-सा स्वाद लिये-दिये।

"नीना, क्या स्वर पाया है ? ओह ! गज़ल क्या कहती है कलेजा निकालकर रख देती है।" उसे सुनकर बहुत अच्छा लगता है। यही तो सुरीला कह रही थी कि रमेश अक्सर कहा करता है—"उँह क्या रखा है प्रशंसा में।" वह कहना चाहती है अपने आप से—लेकिन, अच्छा तो लगता है। और, विनोद, अरे, वह तो बौड़म है। कहता था—"नीनाजी, जी चाहता है कि आप गाती रहें और मैं सदा ऐसे ही बैठा-बैठा सुनता रहूं।" और नीना सोचकर भी हँस पड़ती।" "बुद्धू, क्या भोंदू-सी तो शक्ल है।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कभी शीशा भी देखता है या नहीं, कौन जाने।" सभी तो प्रशंसा करते हैं उसके सौन्दर्य को, उसके कण्ठ की, उसके गान की। अभी उसे यहाँ आये दिन ही कितने हुए हैं। लेकिन—

"जहाँ जाते हो ऐ बिस्मिल
जमा देते हो रंग अपना,
तुम्हारा नाम रहता है ज़ुबाने
अहले महफिल पर।"

और, वह सन्तुष्ट होकर मन ही मन हँस पड़ती।.....सतीश, सतीश भी तो कहता था—'नीनाजी ऐसी गज़ल और कहीं नहीं सुनी।' और अनायास नीना गुनगुनाने लगती—'वह अपनी मस्त निगाहों को कुछ नहीं कहते, हमें शराब की तोहमत लगाई जाती है।'

और फिर—

"आप भी चलिएगा?"

"मुझे अभी बहुत काम है, सतीशजी।"

"काम तो जिन्दगी भर होगा ही।"

"और, क्या काफी फिर कभी नहीं मिलेगी? अगर ऐसी ही बात है तो भई चलती हूं। अभी, इसी दम।" नीना ने कुछ ऐसे लहजे में कहा कि सतीश हँस पड़ा। फिर तो प्रायः रोज ही दोनों साथ-साथ काफी हाउस जाते। रोज नहीं तो सप्ताह में चार-पाँच दिन तो हो ही जाते। यूँ कभी रमेश भी साथ होता और कभी-कभी सुरीला भी होती। किन्तु सतीश को तो वह दिन ही खाली- खाली लगता जिस दिन कि काफी हाउस में नीना के साथ एक कप काफी न हो पाती। दिन खिसक रहे थे, खिसकते ही चले जा रहे थे।

उस दिन दोपहरी कुछ समय से पूर्व ही अलसा रही थी। परीक्षा का अन्तिम दिन था। सतीश सुबह से ही कुछ अन-मना-सा था। परीक्षा तो दे ही डाली। पेपर भी कुछ यूँ ही से हुए थे। शायद पास हो भी जाए तो अच्छा डिविजन शायद ही मिले। किन्तु नीना, नीना से भेंट अब कहाँ होगी, कैसे होगी, यदि हुई भी तो क्या रोज हो पाएगी, हो सकेगी? कल ही की तो बात है, उसने नीना से कहा था—"नीनाजी, पढ़ाई तो अब खतम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

हो रही है।"

"हाँ, मैं तो शुक्र करूँगी। सच सतीश तंग आ गयी मैं तो पढ़ते-पढ़ते और पापा कहते हैं कि अभी विलायत जाकर पढ़ना तो रह ही गया।"

"क्या तुम विलायत जा रही हो?" सतीश के मुँह से अचानक ही फिसल पड़ा। 'जाना ही पड़ेगा।" नीना ने अनायास ही कह डाला। सतीश को जान पड़ा जैसे कोई स्वादिष्ट कौर चबाते-चबाते मुँह में कंकड आ गया हो। नीना कह रही थी—"सच मानो सतीश, ऐसा जी चाहता है कि अब तो इस भीड़-भाड़ से परे कहीं किसी शान्त एकान्त झील के किनारे बस मैं होऊँ और ·····और·····"

सतीश सांस रोके सुन रहा था। वह न जाने क्या सुनना चाहता था। और, अचानक नीना खिलखिलाकर हँस पड़ी। सतीश ने प्रश्न भरी दृष्टि से अचकचाकर नीना की ओर देखा। नीना हँस-हँसकर दोहरी हुई जा रही थी। सतीश एक-बारगी सहमा हुआ-सा उसकी ओर देखे जा रहा था। हँसी से छोटी-छोटी हुई आँखें, आँखों के ठीक नीचे फूल रहे गाल और उनमें पड़े गड्ढे।·····"नीना, नीना के बिना जीवन में भला रह ही क्या जाएगा?' हँसी कुछ थम जाने पर नीना ने थमे से स्वर में कहा—"मैं भी कैसी मूर्ख हूं। भला! कवियों की तरह बातें कर रही हूं। वह भी तुमसे जो स्वयं कवि हो।"

"कवि मूर्ख होते हैं क्या नीना?"

"ओ नो डियर। मुझे यह कल्पना करके ही हँसी आ रही थी कि किसी कवि के सामने कह रही हूं—झील एकान्त और पुस्तक की बात। खैर वह तो होने से रहा, पापा ने सात ताल में बंगला ले लिया है उसी से यह खयाल आ गया। लेकिन मुझे तो शायद सितम्बर में ही विदेश चला जाना होगा।"

अचानक सतीश का जी चाहा कि उन हलकी-हलकी-सी उलझन लिये लहर-दार बालों को अपनी उँगलियों से बिखरा दे तभी काफी का प्याला होंठों से लगाते हुए उसने कहा—"सच सतीश, मैं तुम्हें बहुत मिस करूँगी।" 'मिस करेगी, सिर्फ मिस करेगी?' सतीश ने चाहा कि प्याला उठा कर खिड़की से बाहर फेंक दे और वहाँ से उठकर चल दे तभी नीना ने फिर कहा, प्याला नीचे रखते हुए—"डू राइट टू मी आफ एण्ड आन।" और, उसने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कुर्सी की पीठ पर आने को बिखेर-सा दिया। सतीश कुछ कहना चाहता था किन्तु, किन्तु·····और उसी समय केबिन में एक परिचित से चेहरे ने झांका—"आ सकता हूं ?"

"हलो रमेश ! मैं तो आज सुबह से ही तुम्हें ढूंढ़ रही थी।"

"लो, बन्दा शैतान की तरह हाजिर हो गया। थिंक आफ दी डेविल एण्ड ही इज देयर। हैलो ओल्ड ब्वाय, क्या हाल हैं यार ! कई दिन से तलाश कर रहे थे और जनाब मिले हैं यहाँ !" रमेश हँस रहा था। मुक्त हँसी, निर्द्वन्द हँसी। पतले-पतले होंठ, कोमल-कोमल होंठ मुस्करा रहे थे हौले हौले। सतीश न जाने क्यों डूबा जा रहा था—एकबारगी, भीतर, अपने ही भीतर·····किन्तु यह सब तो पुरानी बातें हैं, पुरानी, बहुत पुरानी। सतीश भूल चुका है, कभी का भूल चुका है वह सब तो। लेकिन····· लेकिन बना-बनाकर तमन्ना मिटाई जाती है।·····उसकी आँखें जल रही थीं, बेतरह जल रही थीं। लेकिन नीना ने ही तो उस दिन कहा था। उस दिन, बहुत दिन पहले उस एक दिन—"सतीश, तुम्हारे स्वर में जादू है। तुम्हारे शब्दों में नशा है। डर लगता है कहीं बहक न जाऊँ।" और, उसने शायद कहा था धीरे-धीरे, बहके-बहके स्वप्नों में—'काश, ऐसा हो जाता नीना !" और, उसने अपनी आँखें नीना की काली-काली, बड़ी-बड़ी, गहरी-गहरी झील-सी आँखों में डाल दी थीं और फिर नीना ने दृष्टि फेर ली थी। हौले से—अनजाने ही, अनचाहे ही। लेकिन वह सब तो बहुत पुरानी बातें हैं। सतीश की इच्छा हुई कि वहाँ से उठकर भाग जाए, दूर कहीं बहुत दूर, बहुत परे, बहुत ही परे, ब्रह्माण्ड से परे।

फिर एक दिन रमेश ने कहा था—"अरे खप्ती क्यों दिमाग खराब किये डाल रहा है ? ये बिजलियाँ हैं, बिजलियाँ ! इनकी चमक देखा करते हैं, इन्हें दीपक बनाकर रखा नहीं जा सकता। समझे !" लेकिन·····लेकिन उसने लिखा था ऐडिनबरा से—"बहुत से साथी मिले हैं यहाँ भी। फिर भी सतीश, तुम जैसा गिफ्टेड कोई नहीं मिला है। काश, तुम यहाँ आ सकते !" फिर रमेश ने हँसकर कहा था—"यार क्यूपिड, बहुत मत बहक, पछताएगा। चाँद छूने के चक्कर में कभी कभी नाक भी तुड़वानी पड़ती है।' क्यूपिड·····क्यूपिड। सतीश तमन्नाओं में उलझ जाता और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

उलझता ही चला जाता।

फिर सब कुछ खो गया। पिता गये। पेन्शन गयी। घर की सुख-शान्ति गयी। रमेश भी क्या करता, कहाँ तक करता।

फिर समय भी कहाँ मिलता था। एकाध बार सतीश ने कहा भी। उसने सहायता करने की चेष्टा भी की। किन्तु थर्ड क्लास एम. ए.·····वह जानता था कि उसे फर्स्ट क्लास लेना चाहिए था लेकिन लिया तो थर्ड ही। बाल उलझते चले गये। चेहरे की चिकनाहट पर रुखाई की परतें चढ़ती चली गयीं। कमीज के कालर के किनारों पर मैल की परतें बढ़ती चली गयीं और होंठों के दोनों ओर पड़ती लकीरें गहरी होती गयीं। वह कवि है तो क्या·····उसके स्वर में शक्ति है तो क्या, वह नौकरी नहीं करेगा। कभी नहीं करेगा। वह स्वतन्त्र रहना चाहता है। उसकी आत्मा मुक्त स्वच्छन्द रहकर ही जीवित रह सकेगी। किन्तु तब तक उसकी बूढ़ी माँ की आत्मा तो शरीर से ही विदा ले लेगी। उसकी अविवाहिता छोटी बहन तड़प-तड़पकर दम तोड़ देगी। उसकी विधवा चाची, छोटा भाई, ओह! तमन्ना·····तमन्ना, संघर्ष·····संघर्ष, उसे कुछ भी तो याद नहीं आ रहा। आ सकेगा ही कैसे? वह स्वतन्त्र नहीं रह पाएगा। रमेश कहता है कि वह पागल है। ठीक ही तो है। ठीक ही तो है। और·····और वह भूलना चाहता था सब कुछ, सभी कुछ, एक-बारगी सभी कुछ। जिन्दगी ने उसे गर्दन से पकड़ तो लिया ही है खूब कसकर, खूब जोर से। तभी एक दिन रमेश ने आकर हँसते हुए कहा—"यार क्यूपिड, भूल जा उसे। क्यों मजनू बन रहा है। वह तो गयी। बस यूं।"—और उसने फुर्र से उड़ने का संकेत किया। सतीश की आँखों में पीलापन आने लगा था। उसके सूट का रंग मटमैला-सा हो चुका था। उसके होंठों पर पपड़ियाँ जम चुकी थीं और बूढ़ी माँ चूल्हे के पास बैठी आँसू बहाते-बहाते थक चुकी थी·····और वह स्वप्न द्रष्टा था। दिवा स्वप्नों में उसे आनन्द आता था।

बड़े साहब ने पार्टी दी थी। सतीश को बड़े बाबू ने नावों का प्रबन्ध करने का काम दिया था और वह कर भी क्या सकता है। वह तो रमेश साहब की सिफारिश पर टिका भी है नहीं तो उसे आता ही क्या है? थर्ड क्लास तो है ही ऐबसेन्ट माइन्डेड, आधा पागल-सा। पुराने बड़े साहब तो

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

फिर भी टाँजरेट कर लेते थे। नये बड़े साहब तो बड़े सख्त हैं। जरा काम में ढिलाई नहीं सह सकते। उनकी पार्टी.....सभी क्लर्क तो लगे हैं। बड़े-बड़े लोग आएँगे, मिनिस्टर, आफिसर, रईस, बिजनेसमैन। फर्स्ट क्लास काम होना चाहिए। आमों का प्रबन्ध हो गया है। आइसक्रीम भी होगी और फिर नाव पर सैर करते हुए तो आइसक्रीम का मजा ही और होता है। सतीश को भी तो अटेन्ड करना होगा। कोई सर्व करने वाला भी तो हो। अरे यूं बेयरे तो हैं ही पर अपने लोगों में से भी तो कोई हो ताकि कोई कमी न रह जाए। बड़े बाबू कोई शिकायत नहीं होने देंगे। उनको एफीशिऐन्सी बार क्रास करने का भी तो समय आ ही गया है। बड़े साहब बहुत कायदा-पसन्द आदमी हैं कोई कमी नहीं सह सकते।

फिर, नारी स्वर गूँज रहे थे। स्वरों में आकर्षण था। नाव के पश्चिम कोने में बैठे हुए सतीश ने सिर उठाकर देखा। वह तड़प क्यों उठा? क्या है ऐसा उस स्वर मे, उस परिचित से स्वर में? बिखरे-बिखरे से उसके उखडे-उखड़े-से छिटके-छिटके-से स्वरों की अन्तिम लहरी तक पहुंचते-पहुंचते दो बिजलियाँ-सी कौंध गयीं। गहराई तक चीरती चली गयीं उसके अन्तर को।

"शाह साहब से कहो न कुछ फरमायें।" फिर किसी दबे से स्वर से गूँज उठा "अरे भई, तुम्हारे दफ्तर का वह बाबू है न एक—क्या भला-सा उसका नाम है, सुना है वह भी कविता-उविता करता है। उसे....." "यार, तुम भी क्या बोर करते हो।" सतीश सिकुड़कर नाव के अन्तिम छोर में दब-सा गया। उसके दिल की तेज धड़कनें उसके कानों में हथौड़े की चोटों की तरह पड़ रही थीं। दूर बैठे हुए रमेश ने उड़ती निगाहों से उधर देखा। उसकी अँगूठी का हीरा, बायें हाथ की छोटी उँगली की अँगूठी का हीरा शाम की धुँधली-सी रोशनी में चमक उठा।

लापरवाही से पड़ी आसमानी साड़ी के कोर को छूती हुई गर्दन, श्वेत संगमरमर-सी गर्दन तनिक घूमी। दृष्टि तनिक उधर पड़ी। क्षणेक को वह तीखी चमकती दृष्टि मिल गयी। मैली, थकी, उदास आँखों की बुझी-बुझी-सी दृष्टि। सतीश का अन्तर तक थरथरा उठा। पृथ्वी, आकाश घूम रहे थे। नदी की चौड़ी छाती पर धीरे-धीरे सरकती हुई नौका उसे अत्यधिक वेग से हिलती-डोलती जान पड़ी। बातचीत का दौर चल रहा था। कोई फटे-फटे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

पुरुष स्वर में गा रहा था—

"जो नकाबे रुख उठा दी तो यह कैद भी लगा दी
उठे हर निगाह लेकिन कोई बाम तक न पहुँचे।"

अन्त तक पहुँचते-पहुँचते स्वर की तल्खी असह्य हो गयी। सतीश का जी चाहा कि नदी में कूद पड़े। कहीं भाग जाए, किसी तरह अन्तर्ध्यान हो जाए।

तभी बड़े साहब की सुन्दर, नन्हीं-मुन्नी गुड़िया-सी सजी-सजाई बच्ची से कह रही थीं बड़े साहब की मेम साहिबा—"जाओ आया के पास जाओ।" और, फिर·····फिर कह रही थी आया से—"आया, देखो उधर उस बाबू से बोलो कि बेबी को आइसक्रीम दे दे। देखो, जरा देख लेना कि सफाई से निकाले। इन लोगों का सफाई का कन्सेपशन ऐसा ही होता है।" न जाने क्या सुनकर उन्होंने बड़े साहब की ओर घूमकर कहा—"यस डार्लिंग।"

सतीश की धुँधली दृष्टि के सम्मुख तीखी, लाल गर्म-गर्म नरकाग्नि जैसी असंख्य चिनगारियाँ उड़ रही थीं। उड़ती जा रही थीं·····उड़ती ही चली जा रही थीं। उसके कानों में पिघला हुआ गर्म शीशा-सा पड़ता जा रहा था। वातावरण में मानो कोई कर्कश कण्ठ चिल्ला रहा था—'यस डार्लिंग, यस डार्लिंग·····' सर में सैकड़ों मशीनों की, तोपों की, मशीनगनों की गड़गड़ाहट चीख रही थी, चीखे जा रही थीं, चीखती जा रही थीं।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अधूरे दायरे

शावर की अजस्त्र धाराओं, अनेकानेक बूंदों का अक्टूबर की इस नर्म-नर्म सी गर्म-गर्म प्रातः में नीला अभी पूरी तरह आनन्द ले भी नहीं पाई थी कि बाथरूम के द्वार पर धीमा-धीमा सा आघात हुआ।

"कौन है ?"

"आया, मेम साहब"

"क्या है आया ?"

"लाल बाबू आया है। बोलता है मेम साहब साढ़े दस बजे मीटिंग है। हम मिनाह किया पर वह अर्जेन्ट बोलने कहा तब हम आया।" नीला ने नल बन्द करके आया की पूरी बात सुन ली। उत्तर भी दे दिया—"अच्छा, बिठाओ हम आते हैं।" उसका मन कड़वाहट से भर गया। कल रात क्लब में डिनर और डान्स नाइट थी। इधर साहब फ्लड रिलीफ के काम में अत्यधिक व्यस्त रहे थे। उसे भी कुछ कम काम नहीं करना पड़ा। कोमल हृदय नीला का मन चिथड़े लगाये उन दरिद्रों को देख-देख कर अत्यन्त द्रवित हो उठा था जो अपनी नगण्य सी गृहस्थी का जलमयी भूमि में विलीन होना आँखों देख चुके थे। कई बार नीला की आँखों में भी जल भर आया था। किन्तु अब कुछ शान्ति थी। पिछले चार दिनों से बाढ़ का प्रकोप शान्त था। बाढ़ पीड़ितों की चीख पुकार भी कम थी। नीला ने भी आठ हजार सत्ताइस रुपये फ्लड रिलीफ फण्ड में जमा करके दिये थे। साहब के काम की बाढ़ भी कुछ कम हो गई थी अतः नीला और साहब कल क्लब में देर तक नाचते रहे।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

यही तो उन्हें हफ्तों बाद जरा सा रिक्रएशन, जरा सी रिलीफ मिली थी। रात को लगभग २ बजे दोनों हंसते बातचीत करते सो गये। प्रातः डी० एम० साहब तो नौ बजे उठकर और चाय का एक प्याला पी कर कहीं घूमने चले गये किन्तु नीला की आंख खुली पौने दस बजे। अलसाई हुई सी नीला कमरे की बन्द खिड़कियों की झिलमिली से आती हुई धूप की किरणों को अनदेखा करके एक एक बार फिर आंखें बन्द करलीं। देह थी सो मानो उठना हिलना ही नहीं चाहती थी। उसका जी चाहा कि कोई चाय का एक गरम प्याला उसके सोते हुए होठों से ही लगा दे। बेयरा को तो घंटी बजाकर बुलाया ही जा सकता है। वह तो प्रतीक्षा कर ही रहा होगा। पर कौन घण्टी बजाये .....वह चुपचाप आंखें बन्द किये पड़ी रही लेकिन कब तक आखिर उठना ही पड़ा और उठकर उसे लगा जैसे उसने बड़ा ही अच्छा किया, उसे उठना ही चाहिए था।

सूर्य की तीखी किरणें खिड़की खोलते ही कमरे भर में घुस आईं। जेठ की गर्मी एक बार फिर मानों दुगनी चौगुनी होकर लौट रही थी। चाय का प्याला मुँह से लगा ही था.....शायद आधा खाली भी हो चुका था कि आया ने आकर कहा—"मेम साहब गुसल तैयार है।" नीला का मन नाच उठा। उसे लगा जैसे इसी की उसे चिर प्रतीक्षा थी। साहब भी शायद लौटते ही हों और वह हाथ का प्याला समाप्त करके उठी। यू० डी० कोलोन पड़े ठंडे पानी के टब में बैठकर नीला ने शावर भी खोल दिया। टब में बैठकर फव्वारे से बूंदें मुँह पर, शरीर पर पड़ने देना उसे बहुत ही पसन्द था। नीला का मन हो रहा था कि वह उठे ही नहीं.....वैसे ही बैठी बैठी के मुँह पर शरीर पर बूंदें पड़ती रहें .....इसी सुखानुभूति के बीच उसे आया से बातचीत करनी पड़ी। उसका मन तिक्त हो उठा।

१४ नवम्बर पास आ गया है.....वह डिस्ट्रिक्ट मेजिस्ट्रेट साहब की पत्नी है.....उसका पति जिलाधीश है.....उसे ही तो समस्त भार लेना पड़ेगा.....शायद कोई मिनिस्टर भी उद्घाटन करने आये। वह तो इस वर्ष पहली ही बार डी० एम० की पत्नी है अतः बाल दिवस तो धूमधाम से मनाना ही होगा। यूँ भी नीला को बच्चे बहुत प्यारे लगते हैं। उसने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

डिप्लोमा भी चाइल्ड साइकोलोजी में ही लिया था । गतवर्ष ही तो वह लंदन में चाइल्ड वेलफेयर के लेकचरस् अटेन्ड कर रही थी । उसके पास दो बड़ी अलमारियां भरा चाइल्ड वेलफेयर का लिटरेचर है । "मां और बालक" दी मदर एन्ड दी चाइल्ड विषय पर उसका लेख अत्यधिक सराहा गया । इसी लिए तो सोशल वेलफेयर के मिनिस्टर ने उसे राज्य समाज सेवा बोर्ड की सदस्या मनोनीत किया था । वह १४ नवम्बर शान से मनायेगी, बड़ी शान से मनायेगी । सभी बच्चों को दूध बँटेगा, मेला होगा, खेलकूद प्रतियोगिताएं भी होंगी । इसी सेबके प्रबन्ध के लिए उसने आज साढ़े दस बजे एक मीटिंग बुलाई है सभी समाज सेवियों की·····और वह तो भूल ही गई । अत्यधिक सुख के बीच बाधा पड़ने पर झुंझलाहट हो आना स्वाभाविक है विशेषतया तब जब कि तृप्ति का प्रथम चरण भी पूरा न हुआ हो किन्तु कर्तव्य····· नीला सामाजिक कार्यकत्री है कर्तव्य परायण है ।

समाज के भविष्य का निर्माण करने के लिए व्यक्ति को अनेकानेक व्यक्तिगत सुखों का बलिदान करना होगा उसने कई बार अपने भाषणों में कहा है । ज्यों ज्यों जल्दी जल्दी नहा धोकर नीला बाथरूम से ड्रेसिंग रूम में आई । रात को देर से आई थी प्रातः की मीटिंग की बात याद भी नहीं थी जब जल्दी में यही नहीं सूझ रहा था कि वह क्या पहने । आया प्रेस तैयार किये खड़ी थी कि मेम साहब दे तो वह उनके ब्लाउज को प्रेस करदे किन्तु मेम साहब परेशान थीं चौड़े चेक की कांजीवरम् की साड़ी तो उन्होने परसों क्लब में ही पहनी थी । लखनऊ चिकन की बढ़िया सिल्क की साड़ी जब उन्होंने पहनी थी तो डी० एस० पी० की पत्नी ने कह दिया था "भई चिकन तो रुबिया वायल पर ही खिलता है ।" और दो चार अन्य महिलाओं ने समर्थन भी किया था । अभी पिछले वर्ष ही उनकी सखी ने उन्हें सिंघापुर से फ्रेंच कढ़ाई की दो नायलोन जार्जेट की साड़ियां लाकर दी थीं लेकिन अब तो उसका फैशन ही नहीं रहा । कांजीवरम् की साड़ियां उनके पास बे शुमार थी किन्तु इस गर्मी में उन्हें पहनकर कैसे जायें । यूँ तो वे फ्रेंच शैफोन भी पहन सकती थी पर सभी तो उनकी साथिनों की देखी हुई थी । सिविल सर्जन की पत्नी तो कल ही क्लब में कह रही थी कि बार बार पहनी हुई साड़ी हमें तो भई आंखों में खटकने लगती है । और कमबख्त घड़ी है कि सुई

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

बढ़ती ही जा रहा है। अभी तो मेकअप भी करना है। इसी समय आया भी बोल पड़ी·····मेमसाहब ! हम बेबी कूँ देखूँगा उसका दूध का टेम होता है। छोकरा कूँ भेज दूँ वह प्रेस मार देगा।' इस कमबख्त को हर समय टेम टेम ही सूझता है। खिजलाहट के मारे गिरे से मन से मेमसाहब ने एक मुर्शिदाबाद के सिल्क की छपी हुई साड़ी निकाल ली लेकिन उसके साथ का ब्लाउज बहुत पुराने फैशन का था। जैसे तैसे मैचिंग की जगह कान्ट्रास्ट दूसरी साड़ी के साथ का ब्लाउज पहन कर जब नीला मीटिंग में सम्मिलित होने पहुंची तो ग्यारह बज चुके थे।

: दो :

"यह तो तय हो जाय कि उद्घाटन कौन करेगा।" बड़ी अदा से लेडी डाक्टर ने कहा।

"हां भई यह तो बहुत जरूरी है।" वकील साहब की पत्नी ने दाद दी। साथ ही उन्होंने धीरे से पास बैठी हुई नगर के रईस और बैंकर सेठ राम प्रसाद की पत्नी से कहा—"मिसिज प्रसाद आपके टाप्स तो बड़े ही सुन्दर हैं कहां से बनवाये ?"

"कहने से कहूं ? भाई अमेरिका गये थे ना वहीं कहीं से प्लेटिनम में हीरे जड़वा कर लाये हैं। भाई दूज पर मिले हैं।"

"पर विदेशों में तो रुपया ही नहीं ले जाया जा सकता है। मेरे दो देवर इंगलैंड में पढ़ रहे हैं पर एक पैसे की चीज नहीं भेज पाते। लिखा था कि दो चार घड़ियां ही ले आयें पर ये कहते हैं कि कुछ भी नहीं आ सकेगा।"

मिसिज प्रसाद ने तनिक सा मुस्करा कर कहा—"जब ये सब राज की बातें हैं।" इसी समय नीला ने बहस करती हुई अनेकों सुरीली आवाजों को दबाते हुए कहा— "तो फिर यह तय रहा कि उद्घाटन करने के लिए चीफ मिनिस्टर को ही एपरोच किया जाये।"

सिविल सर्जन की पत्नी ने तनिक चिढ़कर कहा—"मेरी राय में तो हैल्थ मिनिस्टर ठीक रहते। यूं जैसी आप लोगों की इच्छा हो।"

डिस्ट्रिक्ट इंस्पेक्टर आफ स्कूल की पत्नी बोली—"क्यों बच्चों के मानसिक विकास में तो शिक्षा का अत्यधिक महत्व है एडुकेशन मिनिस्टर को क्यों न बुलाया जाये, क्यों मिसिज वर्मा।"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

स्थानीय गर्ल्स इन्टर कालेज की भारी भरकम प्रिन्सीपल जिन्हें पिछले वर्ष ही पब्लिक सर्विस कमीशन ने इस पद के लिये चुना था बड़े इतमीनान से इन्सपेक्ट्रेस आफ स्कूल्स से कह रही थीं कि इस बार रीजनल स्पोर्टस् उन्हीं के कालेज में होने चाहिये। अपना नाम सुनकर तनिक चौंक कर उन्होंने कहने वाली की ओर देखा और फिर नीला जो कि चेयर मैन थी उनकी ओर देखकर कहा—"बात तो यह ठीक कहती है शिक्षा के बिना कुछ नहीं हो सकता शिक्षा मंत्री को ही बुलाया जाये पर चीफ मिनिस्टर भी ठीक रहेंगे।"

बी० डी० ओ० साहब को भी निमंत्रित किया गया था अथवा यूँ कहिये कि इस समिति के मंत्री बी० डी० ओ० साहब ही थे। तनिक खांस खखार कर उन्होंने कहा कि यह सब काम तो उन्हीं के विभाग के हैं अतः डेवलपमेंट .....पर बात पूरी भी नहीं हो पाई कि सुशीला देवी चीख पड़ीं..... "क्यों सोशल वेलफेयर के मंत्री को क्यों न बुलाया जाये। मेरी राय तो उन्हीं के लिये है।" सुशीला देवी पिछले चुनाव में इसी क्षेत्र से एसेम्बली की सदस्या चुनी गईं थीं और अभी गतवर्ष ही उन्हें राज्य समाज कल्याण बोर्ड की सदस्या मनोनीत किया गया है। सेठानी सूर्य कुँवरी ने उनके मुँह की ओर देखकर कहा—"हां हां यही ठीक है।" सेठानी को सुशीला देवी से आशा है कि वह उन्हें इस बार एम० एल० सी० अवश्य बनवा देगी। उन्होंने शीघ्रता से जोड़ दिया। "और उनका लंच या डिनर मेरे घर पर होगा। मैं आप सबको भी निमंत्रित करती हूं।" सेठ राम प्रसाद की पत्नी ने चिढ़ कर कहा—"अभी १४ नवम्बर का प्रोग्राम तो बना नहीं लंच डिनर पहले तय कर लो।"

"हां तो पहले प्रोग्राम तय कर लिया जाये।" नीला ने थक कर कहा।

"लीजिये अब तो काफी भी आ गई।" बुलबुली लेडी डाक्टर स्वर को पंचम पर चढ़ा कर मुँह को चाय की प्याली सी गोल गोल प्याली बना कर कह गई। सबके चेहरों पर रौनक आ गई। काफी की प्याली खनक उठी। इस समय तक बारह बज चुके थे। नीला को डेढ़ बजे पति सहित सेठ रामप्रसाद के घर लंच पर जाना था। कुछ विदेशी अतिथि भी निमंत्रित थे

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

अतः देर करने की गुंजायश ही कहां थी और फिर उसे अभी तैयार भी तो होना था। उसने कहा— "अच्छा तो प्रोग्राम के लिये एक सब कमेटी बना दी जाये। "हां यह ठीक है।" सभी ओर से सहमति पाकर नीला प्रसन्न हो गई।

"तो फिर लिखिये मि० सिंह....." उसने बी० डी० ओ० की ओर देखकर कहा—"इस सब कमेटी पर आप तो होंगे ही, डिस्ट्रिक्ट इंस्पेक्टर और इंस्पेक्ट्रेस भी रहेंगे। आप ही लोगों को तो करना है, यूं हम सब आपके डिस्पोजल पर हैं जिसे कहिए वही काम कर देगा। ठीक है ना ?"

"जी हां सोतो है ही।"

"बस यह सब कमेटी सब कार्यक्रम तैयार करके हम लोगों को सूचित कर देगी।"

"मिसिज वर्मा को भी इस कमेटी में रखिये।"

"हां और सुशीला बहिन को भी।" दोनों ने एक दूसरे की ओर देखते हुए कहा। ये दोनों नाम भी सम्मिलिखत कर लिये गये। सुशीला देवी ने प्रस्ताव किया 'और कुंवरी सेठानी भी होनी चाहिए उनसे बहुत काम हो सकेगा।"

"ठीक है।"

लेडी डाक्टर से नहीं रहा गया और उनके प्रस्ताव पर वकीलनी और श्रीमती रामप्रसाद भी सम्मिलित कर ली गईं।

अर्थ भरी दृष्टि से एक दूसरे की ओर देखते हुए बी० डी० ओ० साहब ने कहा—" हमारी चेयरमैन ही इस कमेटी की भी चेयरमैन होगी और इसकी वाइसचेयरमैन मिसिज डी० एस० पी० तथा मंत्रिणी लेडी डाक्टर होंगी।"

"ठीक है, ठीक है"

"पर काम आपको ही करना पड़ेगा।"

"काम तो भई स्कूलों के बच्चे ही करेंगे। अतः ये एडुकेशनिस्ट ही सब कुछ ठीक कर लेंगे।" काजू का चम्मच मुंह में डालते हुए लेडी डाक्टर ने कहा—

एक बज चुका था। नीला सबसे क्षमा मांग कर अन्दर तैयार होने

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

चली गई। "ममी माफ करें आज तो बहुत देर हो गई पर क्या करूं १४ नवम्बर पास है। चीफ मिनिस्टर आने वाले हैं सारा इन्तजाम मेरे ही सिर पर है ! ममी ! बेयरा जल्दी खाना लगाओ।

नीला की सास परसों एक सप्ताह के लिए नीला के पास आई है वे बड़ी देर से खाने की मेज पर बैठी बेटे और बहू का इन्तजार कर रही थीं। दोपहर के ढाई बज गये बेचारी इन्तजार करते करते थक गईं। इतने में आया आ गई। बच्चा रो रहा था उसे चुप करा कर सुलाने से पूर्व दादी के पास ले आई। दादी ने देखा कि बच्चे के मुँह पर छोटे-छोटे दाने निकले थे।

"आया ! इसके मुँह पर दाने क्यों हैं ?"

"डाक्टर साहब को दिखाया था मां जी।"

"बेयरा साहब को दिखाया था।"

बेयरा से रुका न गया उसने जाते जाते आया को आंख दिखाते हुये कहा। पर आया कब चुप रहने वाली थी। जन्म से वह उसी की गोद में तो पल रहा था। आज ग्यारह महीने का होने को आया मां की गोद उसने जानी ही कब थी। आया तिनक कर बोली—"मूडी काटे ! चुगली कर देना मेमसाहब से। हम सच्ची बात कू रहेगा। मांजी ! मेमसाहब बच्चा कू देखें आज बारह दिन हो गया है।"

"क्यों बच्चे को क्यों नहीं देखती बहूरानी"

"मेम साहब नौ बजे उठेगा बेबी सात बजे उठेगा दूध पीयेगा दस बजे घूमने जायेगा रात को क्लब से साब मेमसाब ग्यारह बारा बजे आयेगा तब बेबी सोयेगा। कभी हम कहेंगा तो मेमसाब बहुत काम करेंगा गुस्सा करेंगा।"

"तो यह बात है यह चाइल्ड वेलफेयर हो रहा है।" मां जी भरी बैठी थी।

बेयरा खाना लाने लगा। नीला और साहब मेज पर मां के पास बैठ गये। "नीला रानी ! बच्चे को देखे कितने दिन हो गये ?" क्यों मां रोज रात को सोने से पहले देख लेती हूं और फिर आया बहुत अच्छी है। "उसे बड़ी अच्छी तरह रखती है।"

"बेटा ! तुम और नीला यदि मुन्ने को नहीं देख सकते हो तो कहां मैं

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

इसे ले जाऊं बच्चे को इस तरह आया पर छोड़कर कैसे तुम लोगों से रहा जाता है हमसे तो ऐसा नहीं हो सकता था।

"मां ! अब जमाना बदल गया है तुम्हारे जमाने की बात और थी। नीला को तो सोशल वर्क भी करना पड़ता है ना। कल देखोगी वह कितनी बड़ी चिल्ड्रेन्स—रेली कर रही है। चीफ मिनिस्टर आयेंगे तब देखना तुम्हारी बहू कितना काम करती है।"

सास का जी चाहा कि अपना सिर मेज पर पटक दे। उसकी समझ में कैसे आता कि उसकी बहू समाज सेवा कर रही है। वह बाल कल्याण का काम ही उसका जीवन है। उसे याद आ गया कि नीला की मां ने एक दिन कहा था "हमारी नीला को छोटे बच्चे बहुत प्यारे लगते हैं। वह उनकी सब देखभाल करती है।"

मां जी तुम चिन्ता न करो। आया बहुत ही अच्छी है। बस बोलती बहुत है। उसी ने तुमसे उल्टी सीधी लगाई होगी। उसे अकल तो है नहीं। मैं तो बेबी का बहुत ध्यान रखती हूं। आजकल भी "माई चाइल्ड पढ़ रही हूं। बड़ी अच्छी पुस्तक है।"

मां जी ने ठंडी सांस ली। ●

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

वह फिर चूक गई

धीरे धीरे हिलते हुए सुनहले रंग के तरल पदार्थ में उठते हुए नन्हें नन्हें फेनिल उफान उसका मन बांधे ले रहे थे। स्वरों की नन्हीं नन्हीं लटरियाँ उसके पैरों को चंचल किये दे रहीं थी और पसीने की नन्हीं नन्हीं बूंदें उसके गोरे मुखड़े पर चमक रही थीं। रक्ताभ मुख पर एक ऐसी मोहकता, एक ऐसी अनोखी सी चमक थी जो कि किसी भी दृष्टि को बांध बाँध लेती थी।

आर्केस्ट्रा पर बड़ी ही प्यारी धुन चल रही थी·····उसके पैर अनजाने ही थिरक रहे थे और वह न जाने क्यों रह रह कर बेचैन हो रही थी—।

"उस पर बन जाये कुछ ऐसी कि बिन आये न बने·····"

उसने कोमल नंगी बाँहों पर स्पर्श महसूस किया और कुछ ऐसी मासूम सी निगाहों से उसकी ओर देखा कि उसके भीतर ही भीतर हजारों लाखों स्पन्दन तड़फ उठे·····यही तो·····यही तो वह चाहता था·····जीवन ·····भर पूर जीवन·····जब तक स्पन्दन तब तक यौवन·····गहरी गहरी बहुत गहरी काली आँखों की गहरी गहरी सी दृष्टि उसके भीतर तक, अन्तर तक घुसती सी गई, कुछ गहरी सी गई और वह तड़फ उठा·····उसे तड़फन प्यारी लगी·····और दूसरे ही क्षण दोनों फ्लोर पर थे·····

"कैसी भर पूर·····कितनी खुश गवार होगी वह जिन्दगी·····"

"जहाँ हम होंगे तुम होगे और·····और·····"

"कुछ नहीं·····कुछ नहीं होगा·····सिर्फ हम होंगे और तुम होगी····"

दोनों एक दूसरे के मुँह की बात छीने ले रहे थे·····और तब भी

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

दूर मेज पर रखे गिलास का सुनहला पानी नन्हीं नन्हीं सी लहरें ले रहा था ·····नितान्त अकेला·····किन्हीं दो·····आकुल व्याकुल होठों की तड़फती प्यास की प्रतीक्षा में·····बेचैन सा·····परेशान सा·····और वह दोनों फ्लोर पर थे·····

नीरू ने सुबह ही तो अपने बड़े से दर्पण के सम्मुख बैठ कर अपनी चन्द एक चाँदी के से रंग वाली लटों को बड़े ही चाव से, बड़ी ही सम्भाल के, बड़ी ही तरकीब से और बड़े बडे अरमानों के साथ स्याह कर डाला था। उसने सारे मुख को बड़े यत्न से कुछ ऐसा सजाया था जिसमें उसकी त्वचा पर एक भी झुर्री शेष न रह जाये·····उसने बड़े ही प्रयत्न से नाक के आस पास से समय के उन हलके हलके कदमों से चलने पर भी पड़े हुए चिन्हों को मिटाया था·····और ऐसा तो वह सदा ही किया करती है और अब तो यही उसकी रुटीन है····· करीब करीब आदत बन गई है····· हर सुबह वह गुसल करने के बाद यही करती है·····वह गुसल करने से पूर्व दर्पण नहीं देखती·····कभी नहीं देखती·····उसकी आदत ही नही है किन्तु गुसल करते ही वह अपने को आमूल परिवर्तित करने में जुट जाती है, हाँ जुट ही तो जाती है यही तो उसकी आदत है·····आदत बन गई है····· आदत बन गई है·····वह स्वयं अपने आपको उस रूप में नहीं देखना चाहती जिसमें कि उसे अपने आपको देखना प्रिय नहीं है·····हाँ बिलकुल पसन्द नहीं है और·····और फिर वह बिलकुल बदल जाती है और फिर वह दर्पण पर एक ओछी सी दृष्टि डाल कर पूर्णतया सन्तुष्ट होकर बाहर निकल जाती है·····उसे बाहर जाना पसन्द है·····वह पिछले बीस वर्षों से निरन्तर·····प्रति दिन·····हर सुबह शाम बाहर जाती है····· वह वह काम से बाहर जाती है और बिना काम भी बाहर जाती है सुबह बाहर जाती है और शाम को भी बाहर जाती है·····

उसे काम करना पसन्द है·····वह डाक्टर है·····लेडी डाक्टर है····· उसके पास स्त्री जाति के ही मरीज आते हैं·····कराहते तड़फते····· अधिकतर स्त्रियां गर्भवती होती हैं····· अधिकतर स्त्रियां उस प्रसव के पश्चात् कभी भी सन्तान न होने देने के लिए प्रार्थनाएँ करती आती हैं·····

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

वह उन्हें देखती है·····उनकी चिकित्सा करती है और फिर उनके उन नन्हें मुन्नों को देखती हैं जिन्हें वह पृथ्वी पर जीवित लाने में सहायक होती है·····नीरू को बच्चे पसन्द हैं·····वह उन्हें प्यार करती है··· ····उसे अपने मरीज पसन्द हैं वह उन्हें प्यार करती है·····और यही उसकी रूटीन है, उसकी आदत है·····पिछले बीस वर्षों से वह यही कर रही है·····

और फिर शाम को वह एक बार फिर से अपने आप को बदलती है फिर क्लब जाती है·····आफिसरज क्लब और वहाँ·····वहां वह प्रतिदिन जाती है जाये बिना रह ही नहीं सकती है·····भई उसकी रूटीन है, आदत है, स्वभाव है·····भले ही वहां से ग्यारह बजे रात को लौट कर भी उसे फिर रात में दो चार बार उठना पड़े किन्तु वह जाती अवश्य है·····जाये बिना रह ही नहीं सकती है·····वहां कीं रंगीनियां उसकी अपनी होती हैं और·····और·····

वह कह रहा था "नीरू ! नीरू ! मैं तुम्हारे बिना जी नहीं सकता·····"

नीरू खिल उठी·····क्या वह यही चाहती थी क्या इसी की आकुल प्रतीक्षा में वह पिछले दो वर्षों से थी·····उसकी कनपटी के पास की दो चार चांदी की सी लटें बिना दर्पण भी मानो उसके मन में उदय हो उठीं जिन्हें वह बड़े यत्न से अमावस्या की रात्रि की सी रंगत अभी शाम को ही देकर यहाँ लाई थी·····

नीरू के मासूम से दीखने वाले नन्हें से, कोमल से रक्ताभ से चेहरे पर एक हलकी सी लाली फैल गई·····उसकी शोख निगाहें भटकती गईं····· उसकी चंचल नज़रें शर्मा शर्मा सी गईं·····यही·····यही तो मौका है ·····यही तो वह चाहती थी·····उसकी आँखों के सामने वह सभी नन्हें नन्हें गोल मटोल से स्वस्थ सुन्दर बालक घूम गये जिन्हें वह धरती पर लाने में सहायक होती थी·····और·····और शायद वह आखिरी मौका था ·····आखिरी·····अन्तिम·····एक बारगी अन्तिम·····

उसने मेज़ पर रखे हुए गिलास के सुनहले पानी की एक लम्बी घूंट ली ·····सुनहले तरल पदार्थ में लहरें उठने लगी·····फेन आने लगे स्पन्दन ·····यौवन·····स्पन्दन·····यौवन·····विजय गर्व से उसकी दृष्टि चमक

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

उठी यही तो उसका स्वप्न था·····यही तो उसकी अभिलाषा थी····· यही तो उसका अरमान था·····तमन्ना थी·····

"नीरू ! एक बार·····केवल एक बार कह दो कि तुम मेरी हो जाओगी·····" नीरू ने चाहा कि वह कह दे विमल ! यही कहने को तो मैं वर्षों से प्यासी हूं·····मैं तुम्हारी हूं·····तुम्हारी हूं·····और और तुम मेरे हो केवल मेरे केवल मेरे·····विमल·····विमल·····मेरे विमल····· सुनहले पानी की लहरें थिरक रही थी·····फेन उठ रहे थे। नीरू ने मासूम सी दृष्टि उठाई किन्तु कहाँ था विमल·····दृष्टि गहरी थी खूब गहरी····· वह खुदी जा रही थी मेजर आकाशी के अन्तर में गहरी·····बहुत गहरी ·····बहुत ही गहरी·····मेजर तड़फ उठा था·····वह बेचैन था·····

"नीरू ! तुम्हारे एक शक पर मेरी जिन्दगी रंगीन हो उठेगी मेरी रानी·····" सुनहले पानी में नीरू देख रही थी·····एक मासूम सी लड़की को·····उसकी एक चोटी आगे थी और दूसरी पीछे·····उसकी साड़ी का छोर धरती पर खिसक रहा था वह दौड़ती जा रही थी और पीछे से दौड़ते ही आकर एक लड़के ने एक बहुत ही साधारण से तुच्छ से लड़के ने····· मामूली से लड़के ने उसके हाथ से किताब छीन ली·····वह रुआंसी हो गई·····उसकी सांस चढ़ गई थी उसने कठिनाई से कहा—जाओ तुम बड़े दुष्ट हो मैं तुमसे कभी नहीं बोलूंगी·····लड़के ने ढिठाई से कहा—देखेंगे कितने दिन नहीं बोलती है। और उसके पीछे जाकर जोर से पीठ पर एक घूंसा जमा दिया·····लड़की करीब करीब दोहरी हो गई·····

"तो तुम राजी हो नीरू?" मेजर आकाशी की गोद में पड़ा नीरू का हाथ सहसा काँप उठा·····उसके स्याह बालों में भरती हुई सफेदी उसके मन में चमक गई·····उसके चेहरे पर यत्न से छिपाई हुई झुर्रिया उभर आई ·····उसके अरमान·····उसकी अभिलाषा उसकी कल्पना में नाच उठी ·····अन्तिम अन्तिम यही सम्भवत: अन्तिम अवसर है·····सुनहले तरल पदार्थ में आन्दोलित लहरों के बीच चमक उठा एक चेहरा बहुत ही पुराना ·····बहुत ही धुंधला सा बहुत ही मिटता मिटता सा·····बहुत ही धुल पूंछ गया सा चेहरा किंतु वह तो चमक रहा था·····चमक बढ़ती जा रही थी·····बढ़ती ही जा रही थी बढ़ती ही चली जा रही थी·····"नहीं" न

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

जाने कैसे नीरू के मुँह से निकल गया·····आश्चर्य से मेजर आकाशी नीरू की ओर देखने लगा·····

"तो क्या तुम आज तक मुझे बेवकूफ बना रही थीं नीरू ?"

"नहीं।" स्वर में सच्चाई की ध्वनि थी।

"तब ?"

उत्तर था ही कहाँ—

गिलास में सुनहला तरल पदार्थ चमक रहा था नीरू ने सहसा झटके से गिलास उठा कर दो चार लम्बी घूंटे एक साथ भर लीं। बिना कुछ बोले चाले ही वह उठकर चल दी।

स्टेयरिंग को बांई ओर काटते हुए वह सोच रही थी कि यह सब हुआ क्यों ? उसे क्या हो जाता है मौके पर·····वह क्यों चूक जाती है अवसर ·····उसके अरमानों की होली यह कैसे उस ही के हाथों जल जाती है····· यह सब क्या है·····कैसा है·····उसके अरमान·····एक अपना घर एक नन्हा सा मुन्ना··· ····एक सबल पुरुष·····एक छोटी सी गृहस्थी·····

दूसरे दिन संध्या समय वह दर्पण के सामने थी·····बड़े यत्न से उनको चार चांदी की सी लटों को स्याह बना रही थी·····बड़े प्रयत्न से चेहरे पर पड़ी हुई आखों के नीचे नीचे लहराती हुई आड़ी तिरछी रेखाओं को ढकने में सलंग्न थी·····लेकिन क्यों·····किस लिये·····पिछले बीस वर्षो में उसने न जाने कितने ऐसे अवसर खोये ये और सम्भवत: कल अन्तिम अवसर भी खो दिया·····चाँदी की सी लटों की चमक और भी बढ़ती जान पड़ी चेहरे की लकीरें और भी गहरी होती जान पड़ी किन्तु वह रगड़ रगड़ कर उन्हें मिटा देना चाहती थी·····क्यों किस लिये·····फिर एक बार अवसर पाने के लिये·····लेकिन क्यों वह तो सातवीं बार भी मौका चूक गई थी ·····फिर·····फिर·····फिर क्यों·····लेकिन यह तो उसकी रूटीन थी ·····आदत थी·····ऐसा किये बिना तो वह रह ही नहीं सकती थी फिर भी वह बेचैन थी·····लाचार थी·····वही तो उसकी रूटीन थी वही तो उसकी आदत थी·····लेकिन वह फिर चूक गई·····इस बार भी चूक गई·····

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

आखिरी तमन्ना

"डाक्टर साहब·····डाक्टर साहब·····" स्वर की व्याकुलता मानों हृदय की किन्हीं गहरी परतों से तड़फती हुई निकल रही थी·····अति व्यस्त डाक्टर ने धुंधलके से में आँखें पसार कर देखा कि कोई एक अत्यन्त नाजुक से जिस्म वाले·····मुख्तसिर से इन्सान·····शायद पुराने जमाने के लखनऊ की जिन्दा याद की तरह छोटी-छोटी बर्फी सिलाई की निहायत कीमती शायद कमखाब की चपकन पहने सिर पर बेशकीमती लखनवी काम की टोपी रखे उनकी कार से कुछ ही फासले पर खड़े थे। जहाँ पर वह खड़े थे वहाँ सड़क की रोशनी कुछ कम पड़ रही थी·····डाक्टर सुबह सात बजे से मरीजों को देख-देख कर परेशानहाल तीन बजे ही तो घर गये थे·····खाना खाकर लेटे ही थे कि टेलीफोन की घन्टी घनघना उठी····· नौकर को सख्त ताकीद की हुई थी कि चार बजे से पहले उन्हें किसी भी कारण से जगाये नहीं····लेकिन घन्टी·····वह तो बजे ही जा रही थी·····जाड़ों की दोपहर·····वह क्या सोने के लिये होती है नौकर बराबर कहे जा रहा था कि आप ४ बजे के बाद टेलीफोन करें लेकिन वह भी थे कोई सिरफिरे कि टेलीफोन छोड़ ही नहीं रहे थे आखिर झल्ला कर डाक्टर को उठना ही तो पड़ा था और फिर उसी समय जाकर मरीज को देखना भी तो पड़ा था·····वह मरीज था ही ऐसा ·····उसने डाक्टर को पाँच सौ रुपये नकद फीस भी तो दी थी·····वह तो डाक्टर ने टेलीफोन पर यूं ही झुल्ला कर कह दिया था "मेरी इस समय की फीस पांच सौ रुपये हैं।" और उधर से एक पतली हसीन आवाज

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

आई "मैं सवारी भेज रही हूं फौरन आइये ।" खैर यूँ तो पांच सौ रुपये भी कोई कम नहीं होते और वह भी उस हालत में जब कि फीस सिर्फ बत्तीस रुपये ही हो लेकिन डाक्टर को इसकी परवाह ही कौन सी थी·····अकेला दम, लखपति बाप का इकलौता बेटा । माँ बाप रहे नहीं, शादी ब्याह किया नहीं, उसे करना ही क्या था तिस पर मरीज थे कि टूटे पड़ते थे·····हफ्ते बाद की तारीख दो तो और महीने बाद की दो तो, आयेंगे इन्हीं के पास ·····सो पांच सौ रुपये की तो उसे इतनी चाह नहीं थी लेकिन टेलीफोन पर जिस नाजुक आवाज़ ने बड़े दबदबे के साथ उस जैसे बड़े और प्रसिद्ध डाक्टर से बिना किसी हिचक के कह दिया—"फौरन आइये" उसे देखने का प्रलोभन डाक्टर को भरी दोपहरी में, अरे यूँ चाहे तीसरा पहर कह लो पर उसके लिये, उसकी उनींदी आंखों के लिए तो भरी दोपहरी ही थी वह····· और वह गया और दो घंटे बाद ही लौटा चाय तो वहाँ पी ली किन्तु साथ ही साथ सुन्दरी की मस्त आँखों का मद भी कौन कम था उसके पीने के लिये·····सो शाम तक उसी खुमारी में डूबा डाक्टर जब सात बजे क्लीनिक पहुंचा तो दिन तो डूब ही चुका था·····मरीज, मरीज फिर मरीज ·····तड़फते·····चीखते गिड़गिड़ाते मरीज और साढ़े दस बजे जब वह थक कर चूर हो गया तो उसने घर जाने के लिए कार पर पांव रखते ही फिर सुना "डाक्टर साहब·····डाक्टर साहब·····" विरक्ति से उसका मन भर गया·····किन्तु धुंधलके में भी जो दयनीय मुद्रा उसकी दृष्टि तले पड़ी उसकी उपेक्षा तो वह चाह कर भी नहीं कर सका·····

"कहिए" उसने अपेक्षाकृत नम्रता से कहा लेकिन स्वर में तो संसार भर की कटुता भरी हुई थी·····

"डाक्टर साहब·····एक मरीज दिखाना है ।"

"कहाँ है ?"

"घर पर"

"तो कल ले आइयेगा मतब में·····"

"वहीं चलना पड़ेगा आपको सरकार" यह कुछ ऐसे लहजे में कहा गया कि डाक्टर अपनी थकी थकी पलकों को पूरा खोल कर उसकी ओर देखने लगा·····वह कह रहा था·····कह क्या रहा था गिड़गिड़ा रहा था ।

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

"सरकार थोड़ी तकलीफ तो होगी पर उसका दम निकल रहा है....."

डाक्टर कुमार सरल चित्त, दयावान व्यक्ति हैं फिर यह तो उनका कर्त्तव्य ही है.....उन्होंने थके थके से स्वर में कहा—

"आइये, चलता हूं....."

"गाड़ी उधर खड़ी है सरकार.....नवाबसाहब भी इन्तजार कर रहे हैं....."

डाक्टर ने कार को बन्द किया, ताला लगाया और उस आदमी के पीछे पीछे चल दिये.....कुछ ही दूर पर एक शानदार चार घोड़ों की बग्घी खड़ी थी। डाक्टर ने इस नगर में तो ऐसी गाड़ी कभी देखी नहीं थी.....खैर उसे क्या करना है, हो सकता है कोई परदेसी ही हो और फिर अवध में ताल्लुकेदारों की अब भी क्या कमी है.....राज.....रानी होंगे कोई डाक्टर को इस सबसे क्या लेना देना है। गाड़ी के करीब पहुंच कर उस आदमी ने बाहर से ही सात बार फर्शी सलाम करके कहा—"सरकार डाक्टर साहब तशरीफ ले आये हैं.....हुक्म हो जाये....." भीतर से अन्धेरे में से एक मीठी सी मर्दानी आवाज आई "तशरीफ लाईये।" और डाक्टर को जान पड़ा कि वह इत्र से बसे किसी आराम देह कमरे में पहुंच गये हैं.....मुलाजिम शायद गाडी के पीछे चला गया था या कोचवान के पास बैठ गया होगा.....

बहुत हलकी सी मीठी मीठी रोशनी में डाक्टर को दिखाई तो कुछ भी दे नहीं रहा था लेकिन उसे ऐसा जान पड़ा कि गाड़ी में कोई दो व्यक्ति धीमे से स्वर में बात कर रहे हैं.....बात चीत भी तो उसने सुनी नहीं लेकिन बात चीत कोई कर जरूर रहा था.....और डाक्टर को अचानक ऐसा लगा कि किसी ने एक पान उसके हाथ में दे दिया है.....सर्दी की ठंडी ठंडी रात में ग्यारह बजे रात के गहरे गहरे सन्नाटे में ठडा ठंडा पान हाथ में लेकर डाक्टर की रीढ़ की हड्डी तक कांप उठी किन्तु तभी सुनाई दिया।

"नोश फरमाइये डाक्टर साहेब। आपने जो करम मुझ पर किया है उसका सिला आपको अल्लाहताला देगा।" डाक्टर ने आंखें फाड़ कर सामने की सीट पर जो देखा तो एक बुजुर्गवार के ढ़ांचे की हलकी हलकी सी रेखायें दिखाई दीं.....गाड़ी शायद अब हजरतगंज पार करके आउटरम

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

रोड पर जा रही थी·····सड़क पर हवा सांय सांय करके बह रही थी····· कहीं चिड़िया तक का तो नाम था नहीं·····पान में से बड़ी ही प्यारी भीनी भीनी सुगन्ध आ रही थी·····डाक्टर साहब ने ज्यों ही पान को मुँह में रखा उन्हें जान पड़ा कि ह्विस्की की एक बोतल ही चढ़ा गये हों और वह भी बढ़िया पुरानी स्कॉच·····मस्ती से झूमते हुए डाक्टर ने अपना थका हुआ सिर गाड़ी की सीट की पिछली गद्दी पर टिका दिया·····आँखों में झूमने लगी दोपहर की राज कुमारी·····उसके हाथों से बनी बेलजियम कट ग्लास के नायाब प्याले में ढाल कर दी गई चाय और उसकी शरबती आँखें ·····गाड़ी शायद कहीं सुनसान में जा रही थी·····शायद नदी के किनारे किनारे चल रही थी·····हवा में खुनकी बढ़ गई थी और गाड़ी के भीतर की सुगन्ध भी कुछ बढ़ ही गई थी·····और डाक्टर·····डाक्टर ·····को शायद एक झपकी आ गई थी·····तभी एक हलके से झटके के साथ गाड़ी खड़ी हो गई·····

कीमती कपड़े से ढका झिलमिलाता हुआ तामझाम सामने ही था····· कोठी रोशनियों से दुल्हिन की तरह सजी सजाई दिखाई दे रही थी····· जईफ़ी से झुके हुए बुजुर्गवार को, दो कोई शख्स थे शायद खिदमतगार ही होंगे उन्होंने गाड़ी से उतार कर तामझाम में बिठा दिया·····डाक्टर साहब गाड़ी से उतर कर नीचे खड़े थे·····फूलों की क्यारियां दूर दूर तक फैली थीं और चारो तरफ वर्दीधारी नौकरों की तो जानों बरात ही लगी थी····· एक दूसरा चांदी मढ़े डंडों का तामझाम डाक्टर साहब के सामने पेश किया गया।

"नहीं, मैं चल सकता हूं।"

"हजूर इसी पर बैठ लें। ऊँचा चढ़ना होगा" उसी व्यक्ति ने कहा था जो कि डाक्टर साहब को मतब से लिवा लाया था और जो अब न जाने कहां से आकर उसी के पास खड़ा हो गया था।

"मैं सीढ़ियां भी चढ़ सकता हूं।"

"हजूर बेअदबी माफ़·····बहुत तकलीफ होगी।" कार चोबी के काम से सजी वर्दी की ओर देख कर न जाने क्यों पेन्ट कोट धारी डाक्टर को ऐसा जान पड़ा कि उसे वहां के कानून मानकर ही चलना पड़ेगा। अन्यथा

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कुशल नहीं है। चुपचाप बेचारा डाक्टर कुमार पालकी की शक्ल के बढ़िया गद्दों, तकियों, पर्दों से सजे चमचमाते हुए तामझाम में नयी दुल्हिन की भाँति बैठ गया और शायद उस समय बारह बज चुका था·····जाड़ों की कड़कड़ाती रात थी फिर भी वहां तो ऐसा लगता था कि दिन ही निकला हुआ है····· तामझाम लिये हुमक हुमक कर चलते हुए लाल मखमल की पोशाक पर ज़री के काम के पट्टे, कमरबन्द बान्धे हुए व्यक्तियों की श्वासें मानों वातावरण में गर्मी पैदा कर रहीं थीं·····डाक्टर को लगा कि उसका दम घुट जायेगा लेकिन तभी सीढ़ियाँ चढ़ चुकने पर तामझाम नीचे रख दिया गया। पहले वाले मुलाज़िम ने डाक्टर साहब के सामने आकर कहा "सरकार! तशरीफ ले चलें·····' डाक्टर कुमार ने नीचे पैर रखते ही देखा कि महल की ऊपरी मंजिल के खम्भों में पच्चीकारी ऐसी सुन्दरता से की गई है कि जी चाहता है देखता ही जाये·····चारों ओर विलासिता की सामग्री और सौन्दर्य पूरी तरह बिखरा हुआ है·····सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति नग्न प्रतिमाएं ·····श्वेत एवं काले पत्थर, पीतल और शीशे की बनी हुई भवन के स्वामी की सौन्दर्य प्रियता एव रुचि का प्रमाण थी·····झाड़ फानूसों मे जली असंख्य मोमबत्तियां स्वप्न देश की याद दिला रही थीं·····पैर धरती पर रखते ही हाथ भर के कालीन में ही तो धंस गया डाक्टर कुमार तो चकरा ही गये·····तभी एक अनुपम सौन्दर्य प्रतिमा ने ठीक उनके सामने आकर न जाने कैसी तो दृष्टि से उनकी ओर देखा कि उन्हें जान पड़ा कि वह कई पैग ह्विस्की पी गये हैं·····डाक्टर कुमार की थकी थकी बोझिल आँखें न जाने कैसे खुली की खुली ही रह गईं·····इस बार शोख नज़रों से डाक्टर की ओर देखते हुए उस शोख हसीना ने दाहिने हाथ की जगमगाती अंगुली से एक ओर संकेत करके कहा—"तशरीफ ले चलें" और फिर कुछ क़दम आगे बढ़ गई। उसके अंग अंग में न जाने कितने हीरे जवाहरात जड़े ज़ेवर टके से थे·····चुस्त चमचमाते रेशमीं जोड़ों से शरीर सजा हुआ था····· डाक्टर कुमार को जान पड़ा कि वह एक शाहज़ादा है जो कि·····जो कि सात समुन्द्र पार करके स्वप्न देश की सुन्दरी के सतखण्डे महल में जादू के ज़ोर से पहुंच गया है लेकिन तभी पथ प्रदर्शिका सुन्दरी ने अत्यन्त नम्र एवं मीठे स्वर में कहा—"कोर्निश कीजिये·····उधर·····देखिये·····"

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

डाक्टर इस समय सुन्दरी के कोमल चरण पृष्ठ देख रहा था जिसके चलने से हलकी सी मीठी सी पायज़ेब की झंकार होती थी और उसकी लाल सी एड़ी मानो ग़ालीचे पर अहसान सा करती चलती थी.....चौंक कर डाक्टर ने ज्यों ही सामने देखा कि उसे लगा वह अचेत होता जा रहा है.....

बड़े से कमरे के ठीक बीचोबीच एक बड़ा सा छपरखट बेशक़ीमती गद्दों, तकियों से सजा.....मखमली चादर से ढ़का था और उसके ऊपर शायद एक मानव शरीर एक बारगी निश्चल पडा था जिसके ऊपर सिर तक सफेद रेशमी ज़रदोज़ी के काम से सजी हुए चादर थी यों ज़रदोज़ी के बीच बीच शायद माणिक, पन्ने, हीरे, मोती भी टंके थे.....धीमी रोशनी और मीठी मीठी ख़ुशबू से वातावरण कुछ सहमा सहमा सा लग रहा था..... और उसी पलंग पर सिरहाने की ओर एक निश्चल नारी प्रतिमा थी..... डाक्टर शायद ठीक ठीक समझ नहीं पा रहा था कि वह संगमरमर की तराशी हुई निर्दोष सौन्दर्य प्रतिमा थी अथवा कोई हाड़ माँस की बनी सुन्दरी.....उसका चेहरा सफेद पड़ गया था और आखें झुकी हुई थीं..... पथ प्रदर्शिका की आवाज़ सुन कर उस प्रस्तर जैसी प्रतिमा मे स्पन्दन सा हुआ.....बड़ी बड़ी कजरारी सुन्दर आंखें उठीं और डाक्टर की चकराई दृष्टि से टकरा गईं.....अचानक वह नारी अपनी पूरी ऊँचाई पर तन कर खड़ी हो गई ठीक डाक्टर के सामने.....डाक्टर और भी घबरा गया..... क्षणेक मौन दृष्टि से डाक्टर को ताकते रह कर उसने वीणा के से मीठे किन्तु दृढ़ स्वरों में कहा—"आप मेरा काम कर दें मैं जिन्दगी भर आपका अहसान नहीं भूलूंगी..... "

डाक्टर ने प्रश्न सूचक दृष्टि से उसकी ओर देखा। डाक्टर के मुंह से बोल तो फूट ही नहीं रहा था.....सुन्दरी ने नीची दृष्टि करके काँपते हुए होठों से कहा—"यह सब तुम्हारा हो जायेगा सिर्फ इन्हें....." और उसके होठ काँप गये.....आंखें शायद भीग गईं और वह एक हलकी सी चीख के साथ फिर उसी तरह पलंग के सिरहाने बैठ गई मानो फिर से सब कुछ भूल गई हो और तभी डाक्टर ने देखा कि वे बुजुर्ग जो उसे साथ लाये थे पलंग के दूसरी ओर एक तख्त नुमा कुर्सी पर बैठे हैं.....इस बार वे उठकर डाक्टर की तरफ आये और उन्होंने चादर का कुछ हिस्सा उठाया और

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

डाक्टर की तो क़रीब क़रीब चीख ही निकल गई·····वेशकीमती चादर के नीचे एक कटा सिर धड़ के साथ खून में लथपथ रखा था·····बुजुर्ग ने बिना डाक्टर की तरफ देखे हुए ही कहा—"तुम्हें इसे जोड़ना होगा" और उन्होंने चादर फिर ढक दी··· ···डाक्टर का सतर्क, सावधान, चतुर सर्जरी प्रिय मन सजग होता जा रहा था·····धीरे धीरे वह स्थान, काल एवं पात्रों का प्रभाव भूलता जा रहा था·····रात्रि के घने तीसरे पहर की गहराई भी मानों उसे छू नहीं रही थी·····उसने सावधानी से शव की परीक्षा की·····नारी प्रतिमा उसी प्रकार चुपचाप शव के सिरहाने बैठी रही·····कुछ देर बाद डाक्टर ने कहा—"जोड़ने से होगा भी क्या ? यह तो अब जिन्दा हो नहीं सकेंगे ।"

"नहीं, नहीं ऐसा न कहो·····इन्हें·····इन्हें जिन्दा होना ही पड़ेगा ·····या अल्लाह·····इन्हें·····इन्हें·····" और वह शायद बेहोश होकर लुढ़क गई·····पथ प्रदर्शिका सुन्दरी ने अचेत सुन्दरी के मुख पर धीरे धीरे आँचल से हवा करना आरम्भ कर दिया·····

"बेटा ! तुम मेर बेटे की उम्र के हो·····यह मेरी इकलौती बेटी है और यह उसका सिरताज·····इसे जिला दो वरना··· ···वरना हम सब तबाह हो जायेंगे·····"

"लेकिन·····"

इसकी और मेरी जिन्दगी अब तुम्हारे हाथ में है·····मेरा सब कुछ ले लो·····सिर्फ·····सिर्फ·····"

हसीना होश में आ गई थी·····उसने भीगी भीगी सी दृष्टि से कुछ इस तरह डाक्टर की ओर देखा कि·····कि वह·····

डाक्टर कुमार ने उस रात शायद बड़ी मेहनत से रात के तीसरे पहर शव की गर्दन धड़के साथ सी दी·····और·····और अंगूरी ने उसके सर्द तन में गर्मी भी पैदा की और फिर उस सुन्दरी की दृष्टि उसके मन में उत्साह भी भरती रही और फिर उसे याद नहीं कि वह कब और कैसे····· अन करीब सुबह अपनी मोटर के पास तक पहुंचा दिया गया·····और····· और·····जब प्रातः नौ बजे डाक्टर कुमार की आंख खुली तो उसे जान पड़ा कि उसके जोड़ जोड़ में दर्द है । बड़ी मुश्किल से बेड टी लेकर वह उठ

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

कर नहाया धोया·····कल रात का सूट जब उसने फिर पहना तो अचानक उसके हाथ में जेब में हाथ डालते ही एक ठोस सी चीज आ गई·····' डाक्टर कुमार ने रोशनी में निकालकर देखा तो वह एक बेशकीमती पुराने जमाने की अंगूठी थी·····अरे यही अंगूठी तो रात में उस हसीना ने उस शव की अंगुली से निकाल कर डाक्टर को दे दी थी। अचानक बिजली सी रौंध गई डाक्टर के मस्तिष्क में और उसे रात की एक एक स्पष्ट याद आने लगी ·····वह सुन्दरी·····उसकी गीली गीली सी दृष्टि उसके आतुर नयन····· उसकी प्रार्थी आंखें·····डाक्टर कुमार का युवा मन तड़फ उठा·····उसने जल्दी जल्दी कपड़े पहन कर कार निकाली और भैंसा कुण्ड की ओर मोड़ दी यही तो रास्ता था·····डाक्टर पागलों की तरह तेजी से मोटर दौड़ाये जा रहा था·····काफी दूर चलने पर उसे जान पड़ा कि यही तो कोठी थी····· पीली कोठी·····सजा हुआ दुमंजिला महल·····उजड़ी हुई सी यह वीरान कोठी·····नहीं·····नहीं·····यह नहीं है·····लेकिन कार मानों स्वयं चल कर उसी कोठी के भीतर पहुंच गई·····सामने से एक कुरूप····· बूढ़ा शायद माली हो चला आ रहा था·····डाक्टर ने उसे बुलाकर पूंछा— "वे नवाब साहब कहां रहते हैं भाई·····"

"कौन नवाब साहब ?"

"वही जिनकी आलीशान कोठी है खूब सजी बजी·····"

बूढ़े ने अपनी उदास दृष्टि डाक्टर की ओर फेंकते हुए कहा "इधर आस-पास तो कोई नवाब है नहीं साहब·····"

"लेकिन मैं तो कल रात ही एक मरीज देखने यहां आया था·····"

बूढ़े ने थोड़ी दिलचस्पी से डाक्टर की ओर देखते हुए कहा—"यहां मरीज कहां से आयेगा एक मैं ही तो यहाँ रहता हूं और सो भी अकेला·····"

"तब आस पास कहीं और·····"

"नहीं इधर कोई नहीं रहता·····"

"लेकिन नवाब साहब·····उनकी बेटी उनका दामाद·····जो कि कत्ल कर दिया गया था·····" बूढ़ा चीख पड़ा·····शायद वह समझ रहा था ·····उसने अचानक जैसे कुछ समझ कर कहा" आप पागल तो नहीं हो गये साहब·····मेरा दादा बताया करता था कि इस महल के मालिक नबाब

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

साहब की बेटी बड़ी ही पाकीजा औरत थी और थी भी वह नवाब साहब की एकलौती लाडली लेकिन उस अल्लाहवाली के खाबिन्द को फिरंगी ने लड़ाई में मार डाला था..... किसी तरह उसका सिर और धड़ उठा कर यहाँ लाये गये थे और फिर उस नेकबख्त शाहजादी ने अपने खाविन्द के सिरहाने बैठे-बैठे ही भूखे प्यासे जान दे दी.....वह यही कहती रही कि कोई जर्राह इसके सिर को धड़ से जोड़ दे तो यह जरूर खड़ा हो जायेगा यही उसकी आखिरी तमन्ना थी.....पर साहब खुदावन्दताला से किसका जोर है और फिर दीवारों से सिर फोड़ फोड़ कर नवाब साहब भी चल बसे.....खान दान का कोई नाम लेने वाला भी नहीं रह गया.....बस हमारा खानदान उनके नमक का हक अदा करता रहा.....लेकिन यह तो दो सौ साल पुरानी बात है मेरे परदादा के वख्तों की.....सो आज तो मेरे पैर भी कब्र में लटक रहे हैं.....मेरे बाद तो कोई इधर दिया जलाने भी नहीं आयेगा.....साहब ....." शायद बहुत दिनों बाद बूढ़े को कोई सुनने वाला मिला था.....

"मैं जरा ऊपर हो आऊं"

"वहाँ क्या रखा है ? जाना चाहें चले जाईये"

और डाक्टर को यह देखकर ताज्जुब हुआ कि जीने के बाद धूल भरे कमरों में सिर्फ डाक्टर के जूतों के ताजे निशान बने हुए थे.....

आज भी डाक्टर कुमार यह नहीं समझ पाये कि वह स्वप्न था या सत्य किन्तु जब भी उनका हाथ उस अंगूठी पर पड़ता है वह सुध बुध खो गये से, कुछ सोचने सा लग जाते हैं.....शायद उस आखिरी तमन्ना के बारे में जो कभी पूरी नहीं हुई .....

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE

Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Funding by IKS-MoE